खाली कर्जमाफी से ही किसानों का भला नहीं

वर्ष 9, अंक: 6, दिसम्बर-2018

मूल्य: 30 रुपये

सूर्या बुलेटिन

RNI NO. UPHIN/2009/32604

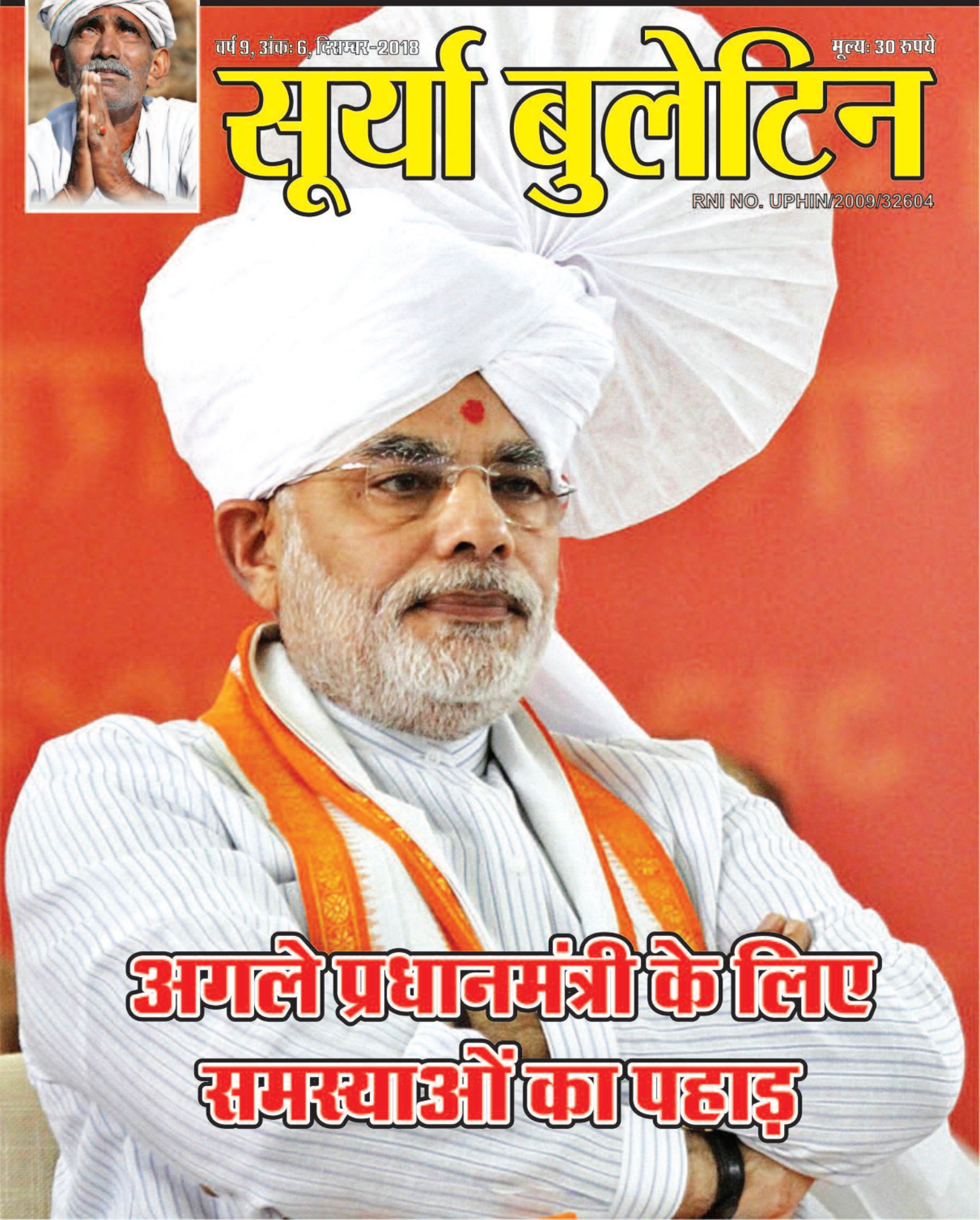

अगले प्रधानमंत्री के लिए समस्याओं का पहाड़

माँ जगदम्बा महाकाली डासना वाली का परिवार

हिन्दू स्वाभिमान

सनातन धर्म रक्षा हेतु हिन्दू स्वाभिमान से जुड़े

जगदम्बा माह काली डासना वाली का परिवार

आपका हार्दिक स्वागत करता है।

राष्ट्रीय अध्यक्ष यति मां चेतनानंद सरस्वती

मो. 9359931727, 93111 39274

www.hinduswabhiman.com

सूर्या बुलेटिन

वर्ष: 9, अंक: 6
दिसम्बर 2018

मुख्य मार्गदर्शक
यति मां चेतनानन्द सरस्वती जी

मुख्य संरक्षक मंडल
डॉ. आर.के. तोमर
श्री विनोद सर्वोदय
श्री हरिनारायण सारस्वत
श्री राजेश यादव
श्री नीरज त्यागी

सम्पादक
अनिल यादव

प्रबन्ध सम्पादक
शुभम मंगला

उप-सम्पादक
पृथ्वीराज चौहान (एडवोकेट सुप्रीम कोर्ट)

सम्पादकीय मंडल
श्री संदीप वशिष्ठ
श्री प्रमोद शर्मा
श्री अक्षय त्यागी
श्री मुकेश त्यागी
श्री दिव्य अग्रवाल
श्री जतिन गोयल

कानूनी सलाहकार
श्री आरपी सिसौदिया (एडवोकेट)
श्री राजकुमार शर्मा (एडवोकेट)

स्वत्वाधिकारी, स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक सीमा यादव द्वारा मै0 सुभाषिनी ऑफसैट प्रिन्टर्स एप-10 पटेल नगर तृतीय, गाजियाबाद से मुद्रित करवाकर प्राचीन देवी मंदिर डासना, गाजियाबाद उ.प्र. से प्रकाशित किया।
टाइटल कोड: UPHIN40005
सम्पादक: अनिल यादव
मो. 9311139274
suryabulletin@gmail.com
RNI NO. UPHIN/2009/32604

नोट: किसी भी लेख की जिम्मेदारी लेखक की खुद की रहेगी। किसी कानूनी विवाद की स्थिति में निपटारा गाजियाबाद न्यायालय में ही होगा।

कवर स्टोरी

अगले प्रधानमंत्री के लिए समस्याओं का पहाड़ पेज-24

डी-एरिया के शहंशाह अमित शाह पेज-04

खाली कर्जमाफी से ही किसानों का भला नहीं पेज-22

कांग्रेस के मुखिया बनने के एक साल बाद राहुल गांधी का उदय पेज-30

कविता का सम्मान अब भी शेष है इस देश में पेज-38

पांच राज्यों में चुनाव के नतीजों का संकेत

पांच विधानसभाओं के ताजा चुनाव नतीजों ने जहां भाजपा के विजयरथ के सामने बड़ा गतिरोध खड़ा किया है, वहीं कांग्रेस में प्राण फूंक दिए हैं। मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान के चुनाव दोनों पार्टियों के लिए मूंछ की लड़ाई बने हुए थे। हालांकि तीनों राज्यों में भाजपा की सरकार थी और ऊपरी तौर पर कयास यही था कि इस बार वहां सत्ता-विरोधी लहर काम करेगी। पर मतदान पश्चात के सर्वेक्षणों में भाजपा की स्थिति मजबूत दिख रही थी। उसने खासकर मध्यप्रदेश और राजस्थान में अपना किला बचाने के लिए कोई कसर नहीं बाकी रखी थी। छत्तीसगढ़ में उसे विश्वास था कि मुख्यमंत्री रमन सिंह के कामकाज से लोग संतुष्ट हैं, इसलिए वहां बहुत जोर लगाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। पर सबसे बड़ी पटखनी भाजपा को वहीं मिली। उसकी इतनी बुरा पराजय का अंदाजा शायद किसी को नहीं था। राजस्थान में दो बातें प्रमुख थीं, जिसे लेकर कयास लगाया जा रहा था कि वहां भाजपा को शिकस्त मिलेगी। पहली तो यह कि वहां का मतदाता हर चुनाव में सरकार बदल देता है। दूसरी कि वसुंधरा राजे सिंधिया के कामकाज से लोग संतुष्ट नहीं थे। पर वहां भाजपा हारी जरूर, मगर उसके मतों के प्रतिशत में बहुत बड़ी गिरावट नहीं आई। इस चुनाव के सबसे दिलचस्प नतीजे मध्यप्रदेश में आए। आखिरी समय तक बहुमत के पास तक पहुंच कर भाजपा और कांग्रेस आगे-पीछे चलती रहीं। इसलिए कि कई विधानसभा सीटों पर दोनों के प्रत्याशियों के बीच मतों का मामूली अंतर बना हुआ था। आखिरकार कांग्रेस की मेहनत रंग लाई। हालांकि शिवराज सिंह चौहान वहां के काफी लोकप्रिय मुख्यमंत्री थे, पर उनके इस कार्यकाल में व्यापमं घोटाला और किसानों की अवहेलना जैसे मुद्दे उनके लिए कठिन साबित हुए। कांग्रेस ने वहां युवाओं की बेरोजगारी और किसानों के कर्ज का मुद्दा उठा कर उन्हें बुरी तरह घेर लिया था। इसके अलावा दो राज्यों- तेलंगाना और मिजोरम में कांग्रेस को शिकस्त झेलनी पड़ी, तो भाजपा का पूर्वोत्तर अभियान भी मंद पड़ता दिखा। दरअसल, ये दोनों पार्टियां इन राज्यों की तरफ अधिक ध्यान केंद्रित नहीं कर पाईं। तेलंगाना में के. चंद्रशेखर राव की पार्टी टीआरएस ने शानदार जीत हासिल की, तो मिजोरम में मिजो नेशनल फ्रंट ने। हालांकि विधानसभाओं के चुनाव नतीजे प्राय: लोकसभा की तस्वीर पेश नहीं करते, पर चूंकि आम चुनाव में बमुश्किल पांच महीने बचे हैं इसलिए मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान के ताजा नतीजे वहां की जनता के मिजाज का संकेत तो देते ही हैं। फिर बिहार विधानसभा चुनाव के बाद से ही भाजपा को चुनौतियां मिलती रही हैं। गोवा में भी कांग्रेस को भाजपा से अधिक सीटें मिली थीं, बेशक उसने वहां सरकार बना ली। इसी तरह गुजरात में उसे चुनाव जीतने के लिए काफी पसीना बहाना पड़ा। ताजा विधानसभा चुनावों में कांग्रेस और भाजपा ने जो कुछ बड़े मुद्दे उठाए वे वही थे, जो अगले आम चुनाव में उठेंगे। कांग्रेस नोटबंदी, जीएसटी, बेरोजगारी और किसानों की कर्जमाफी जैसे मुद्दों को लेकर अधिक आक्रामक रही और इनका असर भी दिखाई दिया। इसके अलावा, मध्यप्रदेश में कांग्रेस को बहुमत से दूर होते देख रुझानों के समय ही समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी ने एलान कर दिया कि वे सरकार बनाने में उसे समर्थन देंगी। यह अगले आम चुनाव के लिए बड़ा संकेत है। महागठबंधन बन चुका है। अभी तक ये दोनों पार्टियां उससे अलग रही हैं, इन नतीजों ने उन्हें लामबंद होने का मौका दिया है। इस तरह इन नतीजों से अगले लोकसभा चुनावों के कुछ संकेत तो मिलते ही हैं।

अनिल यादव

राष्ट्रीय पार्टियों में अध्यक्ष का मतलब

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गांधी-नेहरू परिवार से बाहर के किसी नेता को पांच साल के लिए अध्यक्ष बनाने की चुनौती देकर पुरानी बहस को फिर से छेड़ दिया है। भाजपा के नेता पहले भी यह कहते रहे थे कि भाजपा का अगला अध्यक्ष कौन बनेगा, यह किसी को पता नहीं है पर कांग्रेस के अगले अध्यक्ष के बारे में सब जानते हैं। पहली बार प्रधानमंत्री इस बहस में शामिल हुए हैं। हैरान करने वाली बात है कि वंशवाद की जिस मौजूदगी को भारतीय लोकतंत्र में अनिवार्य रूप से स्वीकार किया जा चुका है और खुद भारतीय जनता पार्टी में नेताओं की कई कई पीढ़ियां एक साथ सक्रिय हैं और कई जगह तो सबको यह भी पता है कि अगला नेता कौन बनेगा। फिर भी यह प्रधानमंत्री मोदी की हिम्मत है कि उन्होंने कांग्रेस को निशाना बनाया। जब तक भाजपा के दूसरे नेता यह सवाल उठा रहे थे तब तक कांग्रेस इसकी अनदेखी करती रही पर इस बार कांग्रेस ने जवाब दिया। पी चिदंबरम ने 1947 के बाद बने 15 कांग्रेस अध्यक्षों के नाम दिए, जो गांधी-नेहरू परिवार से बाहर के हैं। कांग्रेस नेताओं ने यह भी याद दिलाया कि पिछले 29 साल से गांधी-नेहरू परिवार का कोई व्यक्ति प्रधानमंत्री नहीं बना है, जबकि इस अवधि में 15 साल कांग्रेस का राज रहा। आखिरी कांग्रेसी प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह थे। इसी क्रम में कांग्रेस नेताओं ने भाजपा के अध्यक्षों का मुद्दा भी उठाया। सो, अब सवाल है कि कांग्रेस हो या भाजपा इनमें राष्ट्रीय अध्यक्षों का क्या मतलब होता है? ये किस तरह से प्रादेशिक पार्टियों के अध्यक्षों या कम्युनिस्ट पार्टियों के महासचिवों से भिन्न होते हैं? असल में राष्ट्रीय पार्टियों में अध्यक्ष का मतलब तभी होता है, जब उनमें चुनाव जिताने का करिश्मा हो अन्यथा उनकी हैसियत ऑफिस चलाने वाले एक सामान्य कर्मचारी से ज्यादा नहीं होती है। और वह हैसियत भी करिश्माई नेता या नेताओं के रहमोकरम पर होती है। यह ध्यान रखना बहुत जरूरी है कि इक्का दुक्का अपवादों को छोड़ कर राष्ट्रीय पार्टियों का अध्यक्ष चुनने में पार्टी के सामान्य कार्यकताओं की कोई भूमिका नहीं होती है। पार्टी के शीर्ष नेता नाम तय करते हैं और पार्टी उस पर मुहर लगाती है। जैसे पी चिदंबरम ने जो 15 नाम बताए हैं, उनमें एकाध को छोड़ कर बाकी सब पार्टी के शीर्ष नेतृत्व के चुने हुए थे। आजादी के बाद हुआ कांग्रेस अध्यक्ष का पहला चुनाव बड़ा दिलचस्प था। 1950 में उस समय के प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कांग्रेस के दिग्गज नेता और आचार्य जेबी कृपलानी का समर्थन किया था, जबकि उप प्रधानमंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने पुरुषोत्तम दास टंडन को चुनाव में उतारा था। नेहरू के तमाम समर्थन के बावजूद कृपलानी चुनाव हार गए थे। ऐसे मौके भारत की राजनीति में इक्का दुक्का होंगे, जब नेहरू जैसे करिश्माई प्रधानमंत्री के समर्थन के बावजूद उनका उम्मीदवार हार जाए। इससे पहले 1938 में ऐसा वाकया भी कांग्रेस में ही हुआ था, जब महात्मा गांधी के समर्थन के बावजूद उनके उम्मीदवार पट्टाभि सीतारमैया को नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने हरा दिया था।

बहरहाल, आजादी के बाद से लेकर सोनिया गांधी के कांग्रेस अध्यक्ष बनने तक के 50 साल में 15 अध्यक्ष ऐसे हुए, जो गांधी-नेहरू परिवार के नहीं थे। पर इनमें से एकाध को छोड़ कर लगभग सभी गांधी-नेहरू परिवार की कृपा या उनके समर्थन से ही अध्यक्ष बने थे। सो, इनके अध्यक्ष होने का कोई खास मतलब नहीं था। इसका एक कारण यह भी था कि आजादी के बाद धीरे धीरे पार्टी की सारी ताकत प्रधानमंत्री में निहित होती चली गई। जो प्रधानमंत्री होता था वह पार्टी का सबसे बड़ा नेता होता था। यहां तक कि पीवी नरसिंह राव भी प्रधानमंत्री होकर कांग्रेस के सबसे बड़े नेता हो गए थे। कमोबेश यहीं स्थिति भारतीय जनता पार्टी में भी रही। भाजपा का गठन 1980 में हुआ तो अटल बिहारी वाजपेयी इसके पहले अध्यक्ष बने और छह साल तक रहे। उसके बाद लालकृष्ण आडवाणी और फिर मुरली मनोहर जोशी रहे। पहले 13 साल तक ये तीन नेता अध्यक्ष रहे। भाजपा के कुल 38 साल के इतिहास में आधे समय यानी 19 साल तक ये तीन ही नेता अध्यक्ष रहे हैं। भाजपा से पहले भारतीय जनसंघ में भी वाजपेयी 1969 में और आडवाणी 1971 में अध्यक्ष बने थे। इनके अलावा राजनाथ सिंह, नितिन गडकरी और मौजूदा अध्यक्ष अमित शाह को छोड़ दें तो बाकी अध्यक्ष वाजपेयी, आडवाणी और जोशी के बनवाए थे और उनके हिसाब से ही काम करते थे। कुशाभाऊ ठाकरे, जना कृष्णमूर्ति, बंगारू लक्ष्मण या वेंकैया नायडू नाम के ही अध्यक्ष रहे। यानी जो हैसियत कांग्रेस में गांधी-नेहरू परिवार की थी वहीं भाजपा में वाजपेयी, आडवाणी, जोशी की थी और अब मोदी-शाह की है। मतलब यह है कि राष्ट्रीय पार्टियों में जो करिश्माई नेता होगा, जिसमें चुनाव जिताने की क्षमता होगी वह अध्यक्ष रहे या नहीं रहे, वहीं पार्टी का सबसे बड़ा नेता होगा और जो भी पार्टी अध्यक्ष होगा वह उसके हिसाब से काम करेगा।

इससे ज्यादा अध्यक्ष की कोई हैसियत नहीं होती है। इसलिए प्रधानमंत्री के कहे का कोई मतलब नहीं है कि किसी नेता को पांच साल अध्यक्ष बना कर दिखाए कांग्रेस! जब 15 साल परिवार से बाहर के किसी नेता को प्रधानमंत्री बना दिया कांग्रेस ने और गांधी-नेहरू परिवार की सत्ता पर कोई फर्क नहीं पड़ा तो पांच साल किसी के अध्यक्ष रहने से स्थिति नहीं बदलनी है। राष्ट्रीय और प्रादेशिक पार्टियों का फर्क यह है कि प्रादेशिक पार्टियों में अध्यक्ष का पद वंशानुगत और आरक्षित होता है। और नेता के चुनाव जिताने की क्षमता खत्म होने के बावजूद उसी के पास रहता है। प्राचीन और मध्यकाल की तरह वहां सत्ता का हस्तांतरण राजमहल की दुरभिसंधियों या फिर बाहुबल के आधार पर होता है।

डी-एरिया के शहंशाह अमित शाह

जनसभाओं में बनने वाला डी-एरिया वो सुरक्षा घेरा है जो जनता और नेता के बीच सुरक्षात्मक दूरी को रेखांकित करता है। अमित शाह के ट्विटर हैंडल @AmitShah पर कई तस्वीरें हैं जिनमें उनके और जनता के बीच डी-एरिया को प्रमुखता से उभारा गया है। मैंने यह लेख फेसबुक पेज @RavishkaPage के लिए लिखा है क्योंकि इसमें उनकी कई तस्वीरों को पोस्ट करने की सुविधा रहती है। बगैर उन तस्वीरों के इस लेख को समझना मुश्किल है। आप इस लेख के साथ-साथ उन तस्वीरों को भी देखिए जो अमित शाह के ट्विटर हैंडल से पोस्ट की गई हैं जिसके एक करोड़ से ज्यादा फोलोवर हैं। हर नेता चाहेगा कि जनता से उसकी दूरी कम से कम दिखे मगर अमित शाह डी-एरिया की परिभाषित दूरी से खुद की कैसी छवि उभारना चाहते हैं? उनकी सभा की तस्वीरों में डी-एरिया वाली तस्वीरें बिना नागा होती हैं।

एक नेता के नेता बनने की प्रक्रिया में उसके आस-पास की तस्वीरों का रोल होता है। आज कल के नेता खास तौर से इन तस्वीरों को लेकर सचेत रहते हैं। प्रधानमंत्री मोदी कई बार अपने फ्रेम से कैमरामैन को ही बाहर धकेलते देखे गए हैं या मेहमानों को इधर से उधर करते देखे गए हैं ताकि फ्रेम में वे बराबर से आ सकें। इन तस्वीरों से पता चलता है कि एक नेता जनता के बीच खुद को कैसे पेश करना चाहता है और उसी के साथ उस जनता के साथ खुद को कहां देखना चाहता है।

अमित शाह और प्रधानमंत्री मोदी की तस्वीरों में कुछ भी अनायास होता नहीं लगता है। सब कुछ पहले से सोचा हुआ लगता है। कर्नाटक चुनाव के बाद जब वे भाजपा दफ्तर जाते हैं तब कैमरा का एंगल प्रधानमंत्री और अमित शाह को इस तरह फोलो करता है जिसमें वे किसी शिखर सम्मेलन की ऊंची जगह पर चलते दिखते हैं। कैमरे से जो भाषा बनती है वो एक किस्म की पावर-स्ट्रक्चर की भाषा तय करती है। लगता है जैसे फ्रेम पहले से तय किए हों और उसमें आकर प्रधानमंत्री चलने लगे हों। या फिर कैमरे को पता है कि फ्रेम किस तरह से रखना है। राजनीति में विजुअल के इस्तमाल के विद्यार्थी को उस वक्त का वीडियो देखना ही चाहिए। भारत की मौजूदा राजनीति में अमित शाह और नरेंद्र मोदी ने व्यवस्थित तरीके से 'विजुअल हेजमनी' कायम की है। हिन्दी में इसे दृश्यों की वर्चस्वता कहता हूं। तस्वीरों के जरिए अपनी राजनीति प्रदर्शित करने की रणनीति काफी परिपक्व हो चुकी है। इसका एक पैटर्न है। जनता के बीच दिखना है मगर जनता से ऊंचा दिखना है। इनकी कल्पना का नेता महाबलशाली हैं। महाशक्ति हमेशा दूर के फ्रेम में होता है। अकेला दिखता है। उनका फ्रेम किसी स्वर्ण युग की गढ़ी गई कल्पना के नायक को गढ़ता हुआ लगता है। जिसे देख कर जनता आह्लादित हुई जा रही है। अपना सौभाग्य समझ रही है। राजा महाराजाओं के इतिहास में दर्शन देने का स्पेस यानी जगह खास स्थान रखती है। अमित शाह के ट्विटर हैंडल से जारी तस्वीरों के फ्रेम और कटेंट की एक व्यवस्था होती है। जिससे उनकी तस्वीरों का वर्चस्व देखने वालों के जहन पर कायम होता है। आप बीजेपी के किसी नेता के हैंडल पर जाइये ,तस्वीरों के जरिए खुद को देखने और दूसरों को दिखाने की एक परिपक्व व्यवस्था दिखेगी। उनकी पोलिटिक्स का टेक्स्ट विजुअल है यानी तस्वीरें हैं। बगैर चुनाव की प्रक्रिया से गुजरे आप कोई तस्वीर ट्विट नहीं करते हैं। पता चलता है कि नेता ने अपने लिए किन तस्वीरों का चुनाव किया है। उनका एंगल क्या है। उसमें वह कहां खड़ा है। ठीक यही बात आप

भाजपा के सामान्य नेताओं के सोशल मीडिया पेज पर भी देखेंगे। पूरी पार्टी और कार्यकर्ता अपनी राजनीति को एक तरह से देखने लगा है। एक तरह से दिखाने लगा है। पार्टी के भीतर एक किस्म का विजुअल आर्डर यानी दृश्य व्यवस्था कायम की गई है। इसका पैमाना भारत की राजनीति में कभी भी इतना बड़ा नहीं था।

राजस्थान के कुचामन सिटी में जनसभा को संबोधित करने की जो तस्वीर ट्विट हुई है उसे देखते ही लगता है कि अमित शाह खाली मैदान को संबोधित कर रहे हैं। उस फ्रेम में डी-एरिया काफी बड़ा लगता है। जनता की भी तस्वीर है मगर वो तस्वीर अलग से जनता के करीब जाकर ली गई है। मंच से ली गई तस्वीरों में जनता बहुत दूर नजर आती है। कोटपुतली, राजस्थान की तस्वीर में भी डी-एरिया काफी बड़ा नजर आता है। करौली की सभा की तस्वीर से भी यही लगता है। तेलंगाना के आदिलाबाद में डी-एरिया और भी खास तरीके से उभारा गया है। डी-एरिया के बाद भी लकड़ी की बल्लियों से गलियारा से बनाया गया है। एक तस्वीर मध्य प्रदेश के बालाघाट की सभा की है। काफी बड़ा डी-एरिया लगता है। पांढुर्णा(छिंदवाड़ा) की सभा की तस्वीर भी आप देख सकते हैं। मध्यप्रदेश के धार के कुक्षी की सभा की तस्वीर में लगता है जनता को दिखाई ही नहीं दिया होगा कि अमित शाह आए हैं। रोड शो की भी तस्वीरें ट्विट की गई हैं। जिनमें अमित शाह जनता के बीच दिखते हैं मगर काफी ऊंचाई से दिखते हैं। कुछ तस्वीरों में वे गाड़ी से बाहर आकर जनता का अभिवादन करते दिखते हैं। वैसे रोड शो की तस्वीरें क्लोज अप करने पर उसमें बीजेपी के कार्यकर्ता भी बड़ी संख्या में नजर आते हैं। पार्टी की टोपी पहने हुए, गमझा डाले हुए हर कार्यकर्ता मुस्तैद दिखता है। गाड़ियों का लंबा काफिला दिखता है। यह भी सामान्य बात नहीं है कि कोई पार्टी अध्यक्ष अपनी पार्टी को इस तरह सक्रिय रखता है। पर हमारा फोकस डी-एरिया वाली तस्वीरों पर है। क्या अमित शाह को डी-एरिया से खास लगाव है? क्या उनका डी-एरिया बाकी नेताओं से बड़ा होता है? इसकी जानकारी मुझे नहीं है। होती भी तो यहां नहीं लिखता। यह उनकी सुरक्षा का प्रश्न है। पर यह जानना चाहूंगा कि क्या फोटोग्राफर अपनी तस्वीरों में जानबूझ कर डी-एरिया को खास तौर से उभारते हैं ताकि अमित शाह का कदम जनता से दूर और जनता से ऊंचा लगे। मुरैना की सभा का डी एरिया देखते हुए ख़्याल आया कि अमित शाह की सभाओं का यह डी एरिया काफी सजा संवरा लगता है। उसके बाद मैंने सारी तस्वीरों को फिर से देखा। अमित शाह की सभा के

> अमित शाह के ट्विटर हैंडल से जारी तस्वीरों के फ्रेम और कटेंट की एक व्यवस्था होती है। जिससे उनकी तस्वीरों का वर्चस्व देखने वालों के जहन पर कायम होता है। आप बीजेपी के किसी नेता के हैंडल पर जाइये, तस्वीरों के जरिए खुद को देखने और दूसरों को दिखाने की एक परिपक्व व्यवस्था दिखेगी। उनकी पोलिटिक्स का टेक्स्ट विजुअल है यानी तस्वीरें हैं।

डी-एरिया की सजावट खास तौर से की जाती है ताकि वहां की जमीन की ऊबड़-खाबड़ मिट्टी न दिखे।

मोदी की छत्रछाया में अमित शाह का कभी इस तरह से विश्लेषण नहीं होता। वे इस वक्त भारत की राजनीति के सबसे सक्रिय नेता हैं मगर कुछ खास फ्रेम में देखे जाने के कारण उन फ्रेम का विश्लेषण नहीं हो पा रहा है जो वे हर दिन अपने लिए गढ़ रहे हैं। मैं बात कर रहा हूं उस फ्रेम की जो सोहराबुद्दीन, तुलसीराम प्रजापति, कौसर बी के कथित फजी एनकाउंटर से बनता है। जिसकी सुनवाई करते हुए एक जज जस्टिस लोया की संदिग्ध स्थिति में मौत हो जाती है। जय शाह का मामला तो है ही। हाल ही में सीबीआई से जुड़े रहे दो आई पी एस अफसरों ने अपनी जांच में अमित शाह की भूमिका सामने आने की बात को दोहराया है। वही सीबीआई जो अमित शाह को ट्रायल कोर्ट से बरी किए जाने के फैसले को चुनौती नहीं देना चाहती है। अमित शाह के साथ एक भय तो चलता ही है। भय से एतराज है तो आप दबंगई लिख सकते हैं। वे ढीले-ढाले नेता कत्तई नहीं लगते हैं। अमित शाह इन पुराने फ्रेम से बेपरवाह हैं। वे अपने नए-नए फ्रेम को लेकर संजीदा हैं। उसमें रचे-बसे लगते हैं।

अमित शाह के हैंडल पर एक ऐसे अमित शाह दिखाई देते हैं जो अपने नेता मोदी को चुनौती नहीं देते हैं। मोदी के नंबर दो होने के बाद भी अपनी सभाओं में अमित शाह नंबर वन की तरह अवतरित होते हैं। आखिरी बार आपने किस चुनाव में मोदी और शाह को एक ही मंच पर देखा था? अमित शाह के ट्विटर हैंडल को काफी नीचे तक स्क्रोल किया, हर रैली में अमित शाह की रैली अमित शाह की है। वे न तो मोदी के मंच पर हैं और मोदी उनके मंच पर हैं। वैसे मैंने अमित शाह को मेडिसन स्कावयर की तरह विदेशों में कोई शो करते नहीं देखा? कहीं ऐसा तो नहीं दोनों एक दूसरे के क्षेत्र का सम्मान करते हैं, किसी का रास्ता नहीं काटते हैं! वैसे भाजपा के एन आर आई समर्थक अमरीका में अमित शाह की कोई बड़ी रैली क्यों नहीं कराते हैं या अमित शाह ही जाने से मना कर देंगे? क्या कीजिएगा, राजनीतिक लेखन में कयास आ ही जाते हैं। अमित शाह के हैंडल को देखकर बीजेपी का कार्यकर्ता समझ सकता है कि उनका अध्यक्ष स्वतंत्र रूप से पेश आ रहा है। शाह के पहनावों में भी एक खास किस्म की निरंतरता और व्यवस्था होती है। उनके कपड़ों को लेकर कोई ब्रांड भले न बना हो लेकिन वे ठीक-ठाक स्टाइल वाले नेता हैं। इतना आर्डर यानी इतनी व्यवस्था के साथ कोई नेता चले तो बाकियों को भी चलना पड़ता होगा। वैसे मोदी-शाह की राजनीति ने भाजपा कार्यकताओं के पब्लिक में पहनावे को पहले से ज्यादा व्यवस्थित किया है जो उनकी विजुअल हेजमनी यानी दृश्यों की वर्चस्वता की रणनीति का ही हिस्सा है।

मैंने अमित शाह की कम सभाएं ही कवर की है। पिछले तीन साल के अमित शाह की सभाओं को शायद ही कवर किया है। इसलिए मेरे लिए यह कहना उचित नहीं होगा कि अमित शाह की सभा की तस्वीरों में दिखने वाली भीड़ खुद से आ रही है या कार्यकताओं की मेहनत का नतीजा है। वैसे तो सभी नेताओं की सभा में भीड़ लाई जाती है मगर लेकिन तब भी जिज्ञासा तो है कि क्या लोग वाकई अमित शाह को सुनने के लिए दौड़े-दौड़े जाते होंगे जिस तरह प्रधानमंत्री मोदी के लिए जाते होंगे। सिर्फ सवाल है। जानकारी नहीं होने के कारण कोई राय नहीं है। उनकी सभा कवर करने वालों को लिखना चाहिए। क्या वे शाह की सभा को गंभीरता से नहीं लेते हैं? मेरी राय में अमित शाह की सभाओं को गंभीरता से लेना चाहिए। वर्ना आप राजनीति के ईमानदार छात्र नहीं हो सकते हैं। इसलिए आप डी-एरिया को फिर से देखिए। जिसके एक छोर पर अमित शाह नजर आते हैं। दूसरे छोर पर कहीं गुम जनता नजर आती है। दोनों के बीच की दूरी आवाज से तय होती होगी। डी-एरिया की यह दूरी आंख मिलाकर बात करने के नैतिक संकट से भी बचाती होगी। क्या हमारे नेता बोलते वक्त मंच से नीचे बैठी जनता से आंखें मिलाते हैं? क्या इस पर कोई अध्ययन हुआ है? अमित शाह डी-एरिया के बादशाह हैं। डी-एरिया अमित शाह को अलग तरीके से परिभाषित करता है। इसमें एक नेता हमेशा कद्दावर दिखता है। जनता बिन्दु की तरह नजर आती है। उनकी सभाओं का डी-एरिया तस्वीरों में उन्हें उस महाराजा की तरह स्थापित करता है जिसकी आलोचना वे अपनी भाषणों में करते हैं मगर जिसकी आरजू उनके इंतजामों में दिखती है।

अयोध्या से ठाकरे का भाजपा को संकेतः मैं बड़ा हिंदूवादी

शिवसेना का प्रथम ठाकरे परिवार आम तौर पर महाराष्ट्र की सीमा से बाहर नहीं निकलता है. हिन्दुत्व पर अपनी आक्रामकता और 1990 में राम जन्मभूमि आंदोलन को समर्थन देने के बावजूद स्वर्गीय बाल ठाकरे ने कभी अयोध्या में कदम नहीं रखा.

उनके बेटे और पार्टी प्रमुख उद्धव ठाकरे ने पूरे महाराष्ट्र में अपने पिता से कहीं ज्यादा यात्राएं की हैं, लेकिन 52 साल की यह पार्टी बमुश्किल राष्ट्रीय प्रोफाइल बना सकी है. बीते हफ्ताहांत इस स्थिति में बदलाव हुआ है।

पत्नी रश्मि के साथ उद्धव ठाकरे, बेटे व राजनीतिक उत्तराधिकारी आदित्य, पार्टी सांसद संजय राऊत व अनिल देसाई और बड़ी संख्या में दूसरी पंक्ति के नेता अयोध्या पहुंचे ताकि राम मंदिर निर्माण की तारीख घोषित की जा सके.

दो विशेष रिजर्व ट्रेनें भी शिवसैनिकों को लेकर अयोध्या शहर पहुंचीं. आम श्रद्धालु पर्यटकों की तरह ठाकरे परिवार भी लक्ष्मण किला पहुंचा. वहां सरयू नदी के किनारे प्रार्थनाएं कीं, विवादित परिसर में पूजा की और रामलला का आशीर्वाद लिया.

ठाकरे शिवनेरी से मिट्टी लेकर पहुंचे थे, जहां 17वीं शताब्दी का किला है और जो छत्रपति शिवाजी का जन्म स्थल माना जाता है. उन्होंने राम जन्मभूमि न्यास के महंत नृत्य गोपाल दास को प्रतीकात्मक चांदी की ईंट भी दी और एक रैली को संबोधित किया.

शिवसैनिकों की विशाल उपस्थिति और अयोध्या में 25 नवम्बर को विश्व हिन्दू परिषद के धर्म संसद की तारीख अलग-अलग थी. 2019 में लोकसभा और विधानसभा चुनावों के मद्देनजर योजना बनाते समय यह सतर्कता बरती गयी थी.

दो दिवसीय दौरे के दौरान ठाकरे ने तगड़ा माहौल बनाया. 30 साल से बीजेपी की वैचारिक सहयोगी और महाराष्ट्र सरकार में साझीदार रही शिवसेना के निशाने पर थी एक मात्र बीजेपी. ये हैं अयोध्या में उनके कुछ बयान :

हर हिन्दू की यही पुकार, पहले मंदिर फिर सरकार

'जो लोग मंदिर की बात करते हैं उन्होंने वास्तव में श्रीराम को निर्वासन में भेज दिया है...मैं कुम्भकर्ण को जगाने आया हूं. पहले कुम्भकर्ण 6 महीने सोया करता था, अब वह पिछले 4 साल से सो रहा है.' उद्धव ठाकरे

'उत्तर प्रदेश में मजबूत बीजेपी की सरकार है और केन्द्र में बीजेपी की बहुमत सरकार है. मंदिर अब तक बन जाना चाहिए. आपको जो करना हो करें- कानून बनाएं या अध्यादेश लाएं, लेकिन मंदिर हर हाल में बनना चाहिए। एक राजनीतिज्ञ के लिए, जिसके करियर का अधिकांश हिस्सा मंदिर मुद्दे से आंदोलित नहीं रहा हो, वास्तव में ये बहुत कठोर शब्द थे. एक योजना का हिस्सा थे ये शब्द. अलग-अलग नजरिए से देखें, तो ठाकरे के इस बगावती तेवर के तीन पहलू हैंः

पहला, इस आक्रामकता से शिवसेना और बीजेपी के बीच दोस्त से दुश्मनी की ओर बढ़ता संबंध स्पष्ट रूप से विरोधी तेवर अख्तियार करता दिख रहा है. पिछले चार साल से, शिवसेना के नेता केन्द्र और राज्य के मंत्रिमंडल में हैं. सबसे अमीर बृहन्मुम्बई म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन समेत राज्यभर में स्थानीय निकायों की सत्ता में दोनों पार्टियां साझीदार हैं। लेकिन, महाराष्ट्र में ठाकरे सबसे मजबूत विपक्ष की आवाज हैं, जो मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणनवीस से अलग-अलग मुद्दों पर विरोध का कोई मौका नहीं छोड़ते. नोटबंदी समेत विभिन्न मुद्दों पर समय-समय पर वे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर हमले करते रहे हैं।

दोनों पार्टियों, खासकर शिवसेना के कार्यकर्ता भ्रम में रहे हैं कि वे लोग आपस में दोस्त हैं या दुश्मन. शिवसेना दोनों चुनाव गठबंधन से अलग होकर अपने बूते लड़ना चाहती है. उसे अपने हमले दोनों सरकारों पर तेज करने की जरूरत है. बीजेपी से स्वतंत्र होकर खुद को खड़ा करने के लिए उसे इस बात को नजरअंदाज करना होगा कि वह उन सरकारों में सहयोगी के तौर पर बनी हुई है. राम मंदिर पर बीजेपी को परेशान करते हुए शिवसेना की स्थिति हर हाल में मुस्कुराते रहने की बनी हुई है.

ठाकरे दिखाना चाहते हैं कि शिवसेना अपने से ताकतवर सहयोगी को उसके मूल मुद्दे पर चुनौती दे रही है. वे अपनी पार्टी को बीजेपी के मित्र या सहयोगी के बजाए उसे चुनौती देने वाली पार्टी के रूप में स्थापित कर रहे हैं. अगर उन्हें फायदा हो तो वे गठबंधन से बाहर निकल सकते हैं. विकल्प के तौर पर उन्होंने दोस्ती से दुश्मनी की ओर बढ़ता रुतबा बनाया है. इस मुद्दे को उन्होंने साथ चुनाव लड़ने के लिए एक तरह से भावनात्मक शर्त बना दिया है।

राम मंदिर मुद्दे पर बीजेपी को साफ संकेत दिया

दूसरी बात, जिस राम मंदिर मुद्दे से बीजेपी तीन दशकों से पहचानी जाती रही है, उसी मुद्दे को उभारकर और उसी मुद्दे पर बीजेपी से टकराकर ठाकरे बीजेपी नेताओं को संदेश दे रहे हैं कि उनकी तुलना में वे बड़े हिन्दूवादी हैं.

अयोध्या जाकर और नेशनल मीडिया में आकर उन्होंने उम्मीद के मुताबिक अपनी यात्रा को राष्ट्रव्यापी बना दिया. इससे महाराष्ट्र से बाहर उनकी और पार्टी की हिन्दुत्व से जुड़ी पहचान मजबूत हुई है और मंदिर समर्थकों में इस मुद्दे पर ईमानदार और प्रतिबद्ध दिखने की उनकी कोशिश भी सफल हुई है.

शिवसेना देख रही है कि दुर्भाग्य से एक बार फिर 2019 में राम मंदिर निर्माण ही मुख्य मुद्दा होने वाला है, तो वह कोशिश कर रही है कि अपने भगवा रंग को और अधिक गाढ़ा किया जाए.

शिवसेना अयोध्या कांड के बाद से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और इसके आक्रामक संगठन विश्व हिन्दू परिषद के साथ खड़ी रही है, जो तुरंत मंदिर निर्माण के लिए हल्ला मचाते रहे हैं, जो मोदी सरकार से कानून बनाने की मांग करते रहे हैं और जो कहते रहे हैं कि अदालत के निर्णय की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है।

ठाकरे से उम्मीद यही है कि आने वाले समय में बीजेपी के मुकाबले खुद को अधिक भगवामय बताते हुए वे इस मुद्दे को गरम रखेंगे. हरसम्भव मौके पर वे इसे ऊर्जा देते रहेंगे, चाहे वह महाआरती के रूप में हो या फिर ऐसे ही किसी और तरीके से.

बाल ठाकरे हिन्दूवाद के अपने राजनीतिक ब्रांड को कुछ इस तरह समझाया करते थे, 'ज्वलन्त हिन्दुत्व' का अर्थ 'जलता हुआ' हो या 'दहकता हुआ'. ठाकरे अक्सर कहा करते थे कि उन्हें वैसे हिन्दू नापसंद हैं, जिनके पास केवल शेंडी, जनेऊ होते हैं और जो केवल मंदिरों में घंटा बजाया करते हैं। 6 दिसम्बर 1992 को बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद जब बीजेपी के अग्रिम पंक्ति के नेता इस घटना से खुद को अलग बता रहे थे, तो बाल ठाकरे पहले राजनीतिक नेता थे, जिन्होंने इस घटना की जिम्मेदारी लेते हुए कहा था, 'अगर मेरे लड़कों ने यह किया है, तो मुझे उन पर गर्व है।

' महाराष्ट्र के राजनीतिक विश्लेषक मानते हैं कि यह आक्रामकता उद्धव के काल में भोथरी हुई है।

राम मंदिर निर्माण को लेकर उद्धव की अयोध्या यात्रा और बीजेपी के लिए उनके कठोर शब्दों के बाद पार्टी की हिन्दुत्व की छवि धारदार होगी और उत्तर भारतीयों के विरोध के रुख में थोड़ी नरमी आएगी. यह वही पार्टी है, जिसके मुखिया सीनियर ठाकरे को हमेशा सम्मान के साथ 'हिन्दू हृदय सम्राट' कहा जाता था. यह संबोधन बाद में मोदी के लिए भी इस्तेमाल किया जाने लगा।

2019 के आम चुनाव से पहले शिवसेना के विचार में बदलाव

तीसरा, मुम्बई का सामाजिक प्रोफाइल बदल रहा है, जिसमें अब मराठी 30 फीसदी रह गये हैं. मराठी धरती पुत्र का मुद्दा, जिसे शिवसेना पांच दशकों से उठाती रही है, वो भी अब उतना लाभकारी नहीं रह गया है. इस वजह से शिवसेना को अपने कम्फर्ट जोन से बाहर निकलने की जरूरत आ पड़ी है।

'बाहरी' लोगों के लिए शिवसेना नकारात्मक रूप में स्वयंसिद्ध रही है. चुनाव में सफल होने के लिए इस छवि को बनाए नहीं रखा जा सकता।

महाराष्ट्र में लोकसभा की 48 सीटों में मुम्बई और थाणे में ही दस हैं. इन्हीं दो शहरों में महाराष्ट्र की 288 विधानसभा सीटों में 60 सीटें हैं. ठाकरे को अपने खास सेना वोटरों या जिसे मराठी वोट कहा जाता है, उससे बाहर निकलकर देखना होगा. ये दो शहर जो उनके किले माने जाते हैं, वहां शहरी मतदाताओं को उन्हें खास तौर से जुड़ना होगा।

राम मंदिर पर झुकने को कतई तैयार नहीं दिख रहे ठाकरे को उम्मीद है कि इसी रुख के साथ वह अपनी पार्टी का विस्तार गुजराती, मारवाड़ी और उत्तर भारतीय वोटरों में कर सकेंगे जो परम्परागत रूप से बीजेपी को प्राथमिकता देते हैं. उन्हें विश्वास है कि उनमें से कुछ वोटर उनके लिए मतदान करेंगे।

क्या 2019 में शिवसेना के लिए केवल राम मंदिर ही काफी होगा?

बीजेपी या शिवसेना में किसे मंदिर का मुद्दा महाराष्ट्र में अधिक सीट दिलाएगी? 1989 के आम चुनाव में जब राम जन्मभूमि आंदोलन को लालकृष्ण आडवाणी और अन्य नेताओं ने गति दी थी, तब कांग्रेस ने राज्य में 48 में से 28 सीटें जीती थी. तब बीजेपी और शिवसेना को क्रमशः 10 और 4 सीटें मिली थीं।

आडवाणी की रथयात्रा के 6 महीने के भीतर और राजीव गांधी की हत्या के साये में हुए 1991 के चुनाव में कांग्रेस ने 38 सीटें जीती थीं, जबकि भगवा गठबंधन केवल 9 सीटें ही जीत सका था. बीजेपी की ताकत आधी होकर 5 सीटों की रह गयी थी।

बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद मुम्बई में भयानक सांप्रदायिक दंगे हुए थे, जिसके बाद 1992-93 में सीरियल ब्लास्ट हुए. दो साल बाद विधानसभा चुनाव हुए, शिवसेना-बीजेपी को जीत मिली और दोनों ने मिलकर सरकार बनायी. 1996 के आम चुनाव में शिवसेना ने 15 और बीजेपी ने 18 लोकसभा की सीटें जीतीं. इस तरह दोनों ने कुल 33 सीटें जीतीं. कांग्रेस 15 सीट ही जीत सकी।

शिवसेना का मानना है कि हिन्दुत्व पर मतदाताओं के ध्रुवीकरण से उसे मदद मिलती है. इससे बेहतर भावनात्मक मुद्दा और क्या होगा? अक्टूबर में हुई दशहरा रैली में उद्धव ठाकरे ने गर्जना की थी कि अगर बीजेपी मंदिर नहीं बना सकती, तो शिवसेना उसे बनाएगी।

शिवसेना से पूछा ये जाता है कि जब वह केंद्र और राज्य में सत्ता में है और ताकतवर मुम्बई म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन पर उसका नियंत्रण है, फिर भी वह अपने संस्थापक नेता के लिए पांच साल में स्मारक नहीं बना सकी, तो वह अयोध्या में राम मंदिर क्या बनाएगी? इस मुद्दे पर भी ठाकरे की परीक्षा होगी।

वास्तव में यही सही समय है. सामाजिक उथल-पुथल और आर्थिक परेशानियों के बीच एक भावनात्मक मुद्दा मूल चुनावी मुद्दा बनता दिख रहा है और उद्धव इस मुद्दे पर सवार होते हुए कहीं अधिक खुश हैं।

मंदिर पर गरमाने लगा माहौल, उत्साह के साथ-साथ संशय में भी अयोध्या

अयोध्या इस समय उत्साह और उमंग के साथ ही संशय के दौर से भी गुजर रही है। प्रभु श्रीराम के भव्य मंदिर के निर्माण के लिए शुरू हुए आंदोलन ने विश्व हिंदू परिषद, राष्ट्रीय स्वयं संघ, शिवसेना और हिंदू संगठनों के साथ ही आमजन का भी उत्साह बढ़ा दिया है लेकिन 26 वर्ष पहले छह दिसंबर को ढांचा ध्वंस के बाद उत्पन्न हुए हालात को याद कर लोग सहमे भी हैं।

विश्व हिंदू परिषद ने रविवार को बड़े भक्त माल की बगिया में विराट धर्मसभा का आयोजन किया है। इसमें तीन लाख से ज्यादा लोगों के जुटने का दावा है। इसके पहले शनिवार को लक्ष्मण किला में शिवसेना 1100 संतों को सम्मानित करने जा रही है। मकसद एक होने के बावजूद विहिप और शिवसेना के बीच मतभेद हैं।

रोजमर्रा की वस्तुओं से भरने लगे घर

पखवाड़े के भीतर ही छह दिसंबर आने वाला है। 1992 में इसी तारीख को अयोध्या में राम मंदिर आंदोलन के लिए वैसी ही भीड़ जुटी थी, जैसी विहिप ने बुलाई है। तब ढांचा ध्वंस हुआ था लेकिन उसके बाद लंबे समय तक अयोध्या ने दिक्कतों का सामना किया। यहां के निवासी राम शब्द कहते हैं कि भीड़ पर किसी का नियंत्रण नहीं होता, इसलिए कब क्या हो जाए, कहा नहीं जा सकता। लोग अभी से सब्जी, दाल, और रोजमर्रा की चीजों से घर भरने लगे हैं।

हालांकि सरकार ने सुरक्षा के चौकस इंतजाम किए हैं और कहीं कोई घटना न हो, इसके लिए अफसरों की जवाबदेही तय की गई है। शुक्रवार को कार्तिक पूर्णिमा के मेले का समापन था।

इस बार आने वाले श्रद्धालु भी थोड़ा कम आए। अंदाजा सिर्फ इस बात से लगाया जा सकता है कि शुक्रवार की दोपहर को ही अयोध्या की सड़कों पर आवागमन सुचारू रूप से चलने लगा। पहले कार्तिक पूर्णिमा के दिन अयोध्या से गुजर पाना आसान नहीं होता था। यह पुलिस की चौकसी का ही नतीजा है पर, राम मंदिर निर्माण के लिए छटपटाहट भी खूब है। लक्ष्मण किला के करीब लाल कोठी के पास रहने वाली चारुशिला सहचरी कहती हैं कि राम मंदिर बनना चाहिए। अब देर न हो। वह कहती हैं कि प्रभु श्रीराम कुछ ना होने देंगे।

विहिप ने लगाई ताकत

केंद्रीय मंत्री राजेंद्र सिंह पंकज कहते हैं कि राम मंदिर कब का बन गया होता लेकिन तथाकथित सेक्युलर समाज ने रोड़ा अटका दिया। जहां धर्मसभा होनी है उसके पीछे रघुनाथ दास जी की छावनी की भव्य दीवार है। अयोध्या में इसे बड़ी छावनी भी कहा जाता है। जगदीश दास इस छावनी के महंत हैं और मान्यता के मुताबिक वह इस छावनी से बाहर कभी नहीं निकलते।

चंपत राय, लल्लू सिंह और अन्य सहयोगी आदर से उनकी चर्चा करते हैं और कहते हैं कि इन्हीं संतों के त्याग और तपस्या के बल पर आक्रांताओं से यहां की रक्षा हुई।

चंपत राय कहते हैं कि इस मैदान में धान की खेती थी। दस नवंबर को देखा और 12 नवंबर को पूजन कराया। धान कट गया है और अब यहां मंच तैयार हो रहा है। प्रभु श्रीराम सब कुछ सकुशल संपन्न करा देंगे।

राम जन्मभूमि न्यास के सदस्य और पूर्व सांसद राम विलास वेदांती को जमशेदपुर की धर्मसभा में रहना है इसलिए वह यहां की व्यवस्था में योगदान देने आए हैं। वह दावा करते हैं कि तीन लाख लोग जुटेंगे लेकिन, चंपत राय भीड़ के नाम पर किसी भी तरह के दावे से बचते हैं।

कानून के जरिए राजनीति की सफाई!

सुप्रीम कोर्ट ने दागी सांसदों और विधायकों के मामले में एक बड़ा अहम फैसला सुनाया है। अदालत ने सांसदों, विधायकों और पूर्व सांसदों व विधायकों के आपराधिक मामलों की जल्दी सुनवाई का निर्देश देते हुए केरल और बिहार के हर जिले में विशेष अदालत बनाने का आदेश दिया है। इतना ही नहीं सर्वोच्च अदालत ने दोनों राज्यों की उच्च अदालतों से यह भी कहा है कि अगले दस दिन में वे इस आदेश के अनुपालन की रिपोर्ट सुप्रीम कोर्ट में पेश करें।

इसका मतलब है कि इन दोनों राज्यों के सभी जिलों में अगले दस दिन में विशेष अदालतें बन जाएंगी। सुप्रीम कोर्ट के आदेश का दूसरा अहम पहलू यह है कि अदालत ने नेताओं पर दर्ज गंभीर मामलों की सुनवाई पहले करने का आदेश दिया है। यानी कोई गंभीर अपराध जैसे हत्या, अपहरण, बलात्कार, रिश्वतखोरी आदि का आरोप है तो पहले उसकी जांच की जाए।

यह आदेश बहुत अहम है। क्योंकि कुछ समय पहले देश के अलग अलग राज्यों में एक-डेढ़ दर्जन विशेष अदालतें बनीं थीं, पर उनमें सिर्फ राजनीतिक मामलों की सुनवाई हो रही थी। चुनाव आचार संहिता से जुड़े या निषेधाज्ञा आदि के उल्लंघन के मामले सुने जा रहे थे और उनका निपटारा हो रहा था। अब सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद ज्यादा विशेष अदालतें बन जाएंगे और गंभीर मामलों की सुनवाई पहले होगी। पर सवाल है कि क्या इससे राजनीति की सफाई हो जाएगी या इसके साथ साथ कुछ राजनीतिक पहल और करनी होगी?

सांसदों, विधायकों या पूर्व सांसदों, विधायकों पर दर्ज मामलों की जल्दी सुनवाई करके उनके सजा सुना देने से राजनीतिक व्यवस्था से दागी नेता बाहर हो जाएंगे या राजनीति साफ-सुथरी हो जाएगी, यह मानना भोलापन होगा। इसकी कोई संभावना नहीं है कि दागी नेताओं को सजा हो जाने के बाद वे राजनीति से दूर हो जाएंगे। लालू प्रसाद इसकी मिसाल हैं। उनको चारा घोटाले से जुड़े कई मामलों में सजा हो गई है। वे जेल में हैं, पर राष्ट्रीय जनता दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं और पार्टी से जुड़े अहम फैसले वे जेल में बैठ करते हैं। उनकी जगह राजनीति की कमान उनकी पत्नी, बेटे और बेटियां संभाल रही हैं।

इसे और बेहतर तरीके से समझना है तो झारखंड में इस साल हुए उपचुनावों को देख सकते हैं। इस साल झारखंड विधानसभा की दो सीटों झ्र सिल्ली और गोमिया के विधायकों क्रमशः अमित महतो और योगेंद्र महतो को आपराधिक मामलों में सजा हो गई, जिसके बाद उनकी सीटें खाली हो गईं। इन दोनों सीटों पर झारखंड मुक्ति मोर्चा ने दोनों दोषी ठहराए गए नेताओं की पत्नियों को टिकट

दिया और दोनों जीत भी गए।

इसी तरह झारखंड की ही कोलेबिरा सीट के विधायक एनोस एक्का को हत्या के मामले में सजा हुई है और उनकी सीट पर उपचुनाव हो रहा है तो उनकी पत्नी चुनाव लड़ रही हैं। और हो सकता है कि वे भी जीत जाएं। सो, किसी नेता को सजा होने से वह निजी तौर पर विधायक या सांसद बनने से वंचित हो जाता है पर प्रॉक्सी के जरिए राजनीति पर अपनी पकड़ बनाए रखता है।

देश भर की अदालतों में सांसदों, विधायकों और पूर्व सांसदों, विधायकों के खिलाफ चार हजार से ज्यादा मामले लंबित हैं। बहुत से मामले तो तीन दशक पुराने हैं। कुछ मामलों में सालों गुजर जाने के बाद भी आरोपपत्र नहीं दायर किया जा सका है। सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद इन मामलों में जल्दी सुनवाई हो जाएगी और फैसला भी आ जाएगा। इसका तात्कालिक असर यह होगा कि कुछ बड़े नेता हो सकता है कि चुनाव लड़ने से वंचित हो जाएं पर वे राजनीति से बाहर नहीं होंगे।

कोई डेढ़ दशक पहले चुनाव आयोग ने उम्मीदवारों से आपराधिक रिकार्ड का ब्योरा मंगाना शुरू किया था। उसका मकसद यह था कि इससे दागी उम्मीदवारों की संख्या कम होगी और लोग भी समझदारी से अपना जन प्रतिनिधित्व चुनेंगे। पर उसका कोई गुणात्मक असर होने की रिपोर्ट नहीं है। उसी तरह यह फैसला भी गुणात्मक असर डालेगा इसकी संभावना कम है। राजनीति साफ सुथरी बने, इसके लिए राजनीतिक पहल की असरदार साबित होगी।

जब तक राजनीतिक पार्टी नहीं तय करेंगी कि वे आपराधिक छवि के नेताओं के उनके रिश्तेदारों को टिकट नहीं देंगी, तब तक राजनीति की साफ सफाई नहीं होने वाली है। पर उसमें पार्टियों के सामने मुश्किल यह होती है कि बड़े आर्थिक घोटालों के आरोपी या हत्या, अपहरण आदि के आरोपी नेता बहुत प्रभावशाली होते हैं उनमें चुनाव जीतने की क्षमता होती है। इसलिए पार्टियां उनको तरजीह देती हैं।

अगर पार्टियां प्रॉक्सी के जरिए उनको राजनीति में बने रहने की इजाजत नहीं देती हैं तो वे अपनी पार्टी बना कर या निर्दलीय चुनाव मैदान में उतरते हैं या अपने करीबी रिश्तेदार को उतारते हैं। उत्तर प्रदेश में मुख्तार अंसारी और उनका परिवार इसकी है। हर राज्य में ऐसे बड़े नेता हैं। सो, एक समग्र रणनीति बनानी होगी, जिसमें राजनीतिक पार्टियां साफ सफाई के लिए प्रतिबद्ध हों और कानूनी रूप से अपराधियों को पार्टी बनाने, चलाने से रोका जाए।

शिक्षक नियुक्ति में भ्रष्टाचार

उत्तर प्रदेश में अखिलेश यादव के मुख्यमंत्री रहने के दौरान हुई 12,460 प्राइमरी शिक्षकों की भर्ती को इलाहाबाद हाई कोर्ट ने रद्द कर दिया है। कोर्ट ने 68,500 शिक्षकों की भर्ती प्रक्रिया की सीबीआई जांच के निर्देश भी दिए। मालूम हो कि इन 68,500 शिक्षकों की चयन प्रक्रिया मौजूदा योगी आदित्यनाथ सरकार के कार्यकाल में चल रही थी। इससे एक बार फिर शिक्षकों के चयन में कथित भ्रष्टाचार या लापरवाही पर फिर से रोशनी पड़ी है। फिलहाल साढ़े 68 हजार शिक्षकों की भर्ती प्रक्रिया पर रोक भ्रष्टाचार के आरोप लगने के बाद ही लगाई गई है। सहायक शिक्षक भर्ती परीक्षा-2018 के तहत उत्तर प्रदेश में प्राइमरी स्कूलों के लिए 68,500 शिक्षकों की भर्ती हो रही थी। इसके लिए योगी आदित्यनाथ सरकार की ओर इस साल 23 जनवरी को विज्ञापन निकाला गया था। उत्तर प्रदेश में भाजपा की सरकार के सत्ता में आने के बाद बेसिक शिक्षा विभाग की ओर जारी यह सबसे बड़ी भर्ती थी। लखनऊ पीठ ने सीबीआई को मामले की जांच छह महीने के अंदर करने और 26 नवंबर तक इस संबंध में एक प्रगति रिपोर्ट दाखिल करने को कहा है। इसके पहले अदालत ने अभ्यर्थियों की उत्तर पुस्तिकाएं बदलने के मामले में महाधिवक्ता से पूछा था कि राज्य सरकार क्या इस मामले की सीबीआई जांच कराने को तैयार है? उस पर महाधिवक्ता ने सरकार की ओर से सीबीआई जांच से इनकार कर दिया था।

अदालत ने यह पाया था कि कुछ उत्तर पुस्तिकाओं के पहले पृष्ठ पर अंकित बार कोड अंदर के पृष्ठों से मेल नहीं खा रहे हैं। अदालत ने इस पर हैरानी जताते हुए कहा कि उत्तर पुस्तिकाएं बदल दी गई हैं। इस पर महाधिवक्ता ने मामले की पर्याप्त जांच का भरोसा दिया था। इसके बाद अदालत ने मामले की सीबीआई जांच के आदेश दिए। इसके अलावा दूसरे मामले में अदालत ने पाया कि अखिलेश यादव के मुख्यमंत्री रहने के दौरान 12,460 सहायक शिक्षकों की भर्ती प्रक्रिया में उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा (शिक्षक) सेवा नियम- 1981 का उल्लंघन किया गया। अदालत ने निर्देश दिए हैं कि 2016 की भर्ती प्रक्रिया फिर से शुरू की जानी चाहिए। हाई कोर्ट के दोनों फैसलों को उत्तर प्रदेश सरकार चुनौती देगी। खबरों के मुताबिक हाई कोर्ट का फैसला आने के बाद मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने निर्देश दिए कि जिन लोगों को नौकरी मिल चुकी है, उनके हितों की रक्षा की जाए। लेकिन भ्रष्टाचार के आरोप से ये नियुक्तियां कैसे धुलेंगी, इसका जवाब भी भाजपा सरकार को देना होगा।

ब्राह्मण कम हैं, फिर उनको क्यों लुभाना चाहते हैं राहुल गांधी?

ब्राह्मण बहुत बड़ा वोट बैंक नहीं है. 1931 की जनगणना के अनुसार भारत में ब्राह्मणों की संख्या 5.52 परसेंट थी. इसमें वे तमाम जातियां भी थीं, जिन्हें ब्राह्मण अपनी बिरादरी का नहीं मानते लेकिन जो खुद को ब्राह्मण मानती हैं. तब जिन जातियों ने खुद को ब्राहमण लिखवाया था, उनमें से कई जैसे जांगिड़ और गोस्वामी अब ओबीसी में हैं. त्यागी और भूमिहार अलग जाति की तरह व्यवहार करते हैं और ब्राह्मणों के साथ उनका विवाह संबंध नहीं चलता. जनगणना के नियमों के मुताबिक, जिन्होंने भी खुद को ब्राह्मण बताया, वे सभी इस 5.52 परसेंट के आंकड़े में शामिल है.

आज देश में ब्राह्मणों की कितनी संख्या है, इसका सिर्फ अनुमान लगाया जा सकता है. 1931 के बाद जाति जनगणना के आंकड़े नहीं आए हैं. ये मानकर चल सकते हैं कि ब्राह्मणों का शहरीकरण ज्यादा हुआ तो उनमें शिशु जन्म दर कम होगी और उनकी संख्या का अनुपात पहले से ज्यादा तो नहीं ही हुआ होगा. हालांकि ये भी एक अनुमान ही है. ब्राह्मणों में विदेश जाकर बस जाने वालों की संख्या भी अच्छी-खासी है.

एक अंदाजा ये भी लगाया जा सकता है कि चूंकि भारत में पढ़े-लिखे लोग वोट कम डालते हैं, इसलिए ब्राह्मणों में वास्तविक मतदाताओं की संख्या भी अपेक्षाकृत कम होगी। तो इतने से वोट के लिए राहुल गांधी बनियान उतारकर और जनेऊ

दिखाकर क्यों घूम रहे हैं?

राहुल गांधी जब खुद को ब्राह्मण दिखाने की कोशिश कर रहे हैं तो उनके सामने ब्राह्मण वोटों का आंकड़ा नहीं है. सिर्फ संख्या की बात है तो 52 फीसदी से ज्यादा ओबीसी, 16.6 फीसदी दलित, 14.2 फीसदी मुसलमानों या 8.6 फीसदी आदिवासियों के मुकाबले ब्राह्मण काफी कम हैं.

मराठा, जाट, पटेल, यादव, कम्मा, रेड्डी, नायर, नाडार, वन्नियार, कुर्मी, मल्लाह जैसी कई जातियां खास इलाकों में ज्यादा बड़ी संख्या में हैं और मतदान के नतीजों को प्रभावित करने की बेहतर स्थिति में हैं. इसके बावजूद, राहुल गांधी ने अपनी ब्राह्मण पहचान को साबित करने के लिए जान लड़ी दी है।

ब्राह्मणों को लुभाने की कोशिश सिर्फ कांग्रेस नहीं कर रही है. बीजेपी जब केंद्र में अपनी सरकार बनाती है तो कैबिनेट में ठीक एक तिहाई मंत्री सिर्फ ब्राह्मण बनाती है. वित्त, विदेश, रक्षा, मानव संसाधान, स्वास्थ्य, सड़क और जल परिवहन जैसे महत्वपूर्ण विभाग ब्राह्मण मंत्रियों को दिए जाते हैं. बीजेपी पार्टी को चला रहा आरएसएस, एक अपवाद (राजेंद्र सिंह) को छोड़कर हमेशा अपना मुखिया किसी न किसी ब्राह्मण को ही बनाता है. बीजेपी ने केंद्रीय ब्यूरोक्रेसी में राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार से लेकर कैबिनेट सेक्रेटरी और प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव सभी एक ही जाति के बनाए हैं.

सवाल उठता है कि कि इतनी कम संख्या होते हुए भी ब्राह्मण राजनीति में इतना महत्वपूर्ण क्यों हैं?

मीडिया की टु स्टेप थ्योरी और ओपिनियन लीडर्स जैसे कम्युनिकेशन के एक लोकप्रिय सिद्धांत के जरिए आसानी से समझा जा सकता है कि कम संख्या के बावजूद ब्राह्मण राजनीति में इतने महत्वपूर्ण क्यों हैं. इस सिद्धांत का नाम टु स्टेप या मल्टी स्टेप थ्योरी है. इस थ्योरी के मुताबिक कोई भी संदेश या संवाद स्रोत जैसे टीवी, रेडियो या अखबार से सीधे सुनने वाले तक असरदार तरीके से नहीं पहुंचता।

इस संदेश को पहले समाज के प्रभावशाली लोग, जिन्हें ओपिनियन लीडर्स कहा जाता है, वे पकड़ते हैं, उस पर अपनी राय बनाते हैं, उसमें अपने विचार जोड़ते-घटाते हैं और वे जब इसे नीचे तक ले जाते हैं, तब जाकर वह संवाद असर पैदा करता है.जिन लोगों का समाज में आदर और असर होता है, उनकी बात सुन कर बाकी लोग अपनी राय बनाते हैं.

इस थ्योरी को सबसे पहले 1944 में प्रकाशित किया गया था. अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव के दौरान

ये पाया गया कि आम जनता सीधे रेडियो या समाचार पत्र से सूचनाएं लेकर अपनी राय कम बनाती है. उनकी राय बनाने में उन लोगों यानी ओपिनियन लीडर्स का ज्यादा योगदान होता है, जो रेडियो या अखबारों की सूचनाओं को अपने ढंग से समझते हैं और उसमें अपनी राय जोड़कर बाकी लोगों तक पहुंचाते हैं.

जर्मन दार्शनिक जरगन हैबरमास अपनी पब्लिक स्फियर की थ्योरी में विमर्श की उन जगहों को लोकतंत्र में जरूरी मानते हैं, जहां लोग आपस में चर्चा करके सार्वजनिक मुद्दों पर राय बनाते हैं और किसी निष्कर्ष पर पहुंचते है. पब्लिक स्फियर में ओपिनियन लीडर्स मत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं.

ब्राह्मण हैं भारत के ओपिनियन लीडर्स

शिक्षा तक सबसे पहले पहुंच होने की वजह से ब्राह्मणों की लोक संवाद के क्षेत्र में अच्छी दखल है. कई पीढ़ियों से पढ़ने-लिखने के कारण उनका एक खास तरह का सामाजिक स्तर बन गया है, जिसकी वजह से आदर के पात्र हैं और उनका असर समाज पर है. वे महत्वपूर्ण पदों पर भी हैं. खासकर शिक्षक बनने के क्षेत्र में उनका पारंपरिक दखल रहा है, क्योंकि परंपरागत रूप से पढ़ाने का पेशा ब्राहमणों के पास रहा है.

गांव-कस्बों में शिक्षक की काफी इज्जत होती है और उनकी बात सुनी जाती है. देश दुनिया में क्या चल रहा है, इसे डिकोड करके अक्सर शिक्षक ही आम लोगों तक पहुंचाता है. इसके अलावा भारतीय खासकर हिंदू समाज व्यवस्था में ब्राह्मण शिखर पर हैं और इस वजह से आदर के पात्र हैं. यहीं नहीं, ब्राह्मण एक आम हिंदू और भगवान के बीच मध्यस्थ भी होता है. इस वजह से भी उसकी बात महत्वपूर्ण होती है.

लोक विमर्श में और जनता की राय बनाने में ब्राह्मण इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि उसकी बहुत ज्यादा संख्या है. उसकी ताकत ये है कि वह समाज का ओपिनियन लीडर है. लोग उनकी बातों को गौर से सुनते हैं. वह समाज में आदर का पात्र है. चूंकि बच्चों का नाम रखने से लेकर, शादी करने, और बच्चा पैदा होने से लेकर आदमी के मरने तक में वह मार्गदर्शक है, तो स्वभाव वश लोग राजनीतिक-सामाजिक मामलों में भी उनकी राय मान लेते हैं।

इसके अलावा मीडिया और जनसंचार के साधनों पर भी ब्राह्मणों की अच्छी खासी संख्या है. योगेंद्र यादव, अनिल चमड़िया और जितेंद्र यादव ने 2006 में दिल्ली मे मीडिया संस्थानों के फैसला लेने वाले पदों का सर्वे करके बताया था कि इन पदों पर ब्राह्मणों की संख्या 49% है.

लोकतंत्र में लोगों की राय बनाने में मीडिया की भूमिका से कोई इनकार नहीं कर सकता. एजेंडा सेट करने में मीडिया की भूमिका पर दुनिया भर में कई रिसर्च हो चुके हैं. भारतीय मीडिया में मौजूद ब्राह्मण जिस राजनीतिक दल या नेता के पक्ष में खड़े हो जाएं (हालांकि यह पूरी तरह कभी नहीं होता), उस दल या नेता के पक्ष में जनमत के झुकने की संभावना ज्यादा होती है?

महाभारत के बाद शालीनता का महापर्व

भाजपा के तीन मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, वसुंधरा राजे और रमन सिंह महाभारत के उन तपे हुए योद्धाओं की तरह थे, जिनके नाम के आगे बड़ी विजयों की पूरी श्रृंखला थी, लेकिन उन्हें पता था कि आज इस धर्मयुद्ध में वे पिछले पांव पर हैं।

एक महीने के शोर शराबे और हद दर्जे के आक्रामक प्रचार अभियान के बाद पांच राज्यों की चुनावी महाभारत अपनी परिणिति को पहुंच गई. यह अब तक का सबसे आक्रामक रण था. इस रण में महाभारत के युद्ध की तरह तमाम मयार्दाएं टूट गईं. 'करो या मरो' की लड़ाई लड़ रहे कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने प्रचार अभियान को बेहद निजी बना दिया था. प्रधानमंत्री को निशाना करके उन्होंने जो नारे लगवाए, वैसे नारे तो कभी उनके पिता राजीव गांधी के खिलाफ भाजपा ने ही लगवाए थे. राहुल गांधी उस अर्जुन की तरह आरोपों के तीर बरसा रहे थे, जिसके लिए विजय का लक्ष्य पारंपरिक मयार्दा से कहीं ऊपर हो गया था. और जिसके पास अपनी हर चाल के लिए 'शठे शाठ्यम समाचरेत' की दलील थी.

दूसरी तरफ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी थे जो कामदार बनाम नामदार के नारे के साथ रणभूमि में खड़े थे. वे अपनी रैलियों में कभी विदुर की तरह चतुर, तो कभी दुवार्सा की तरह कुपित नजर आए. आवेश में आकर उन्होंने भी उस तरह की बातें कहीं जिन्हें न दोहराना ही श्रेयस्कर होगा.

जब दोनों शीर्ष नेता ही वीर रस से रौद्र रस में प्रवेश कर गए, तो नीचे वाले नेताओं और कार्यकताओं को वीभत्स रस में जाने से कौन रोक सकता था. उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने भीम की धर्मध्वजा में विराजमान रहने वाले पवनपुत्र हनुमान की जाति पर शोध कर डाला. वे यहीं नहीं रुके, उन्होंने बली और अली की फूहड़ तुकबंदी भी कर डाली. जब वे इस विचित्र पौराणिक शोध में जूझ रहे थे, तब उनके गृहराज्य उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर में शासन के सामने 'दुःशासन' ने सिर उठाया और उन्मादी भीड़ ने एक थानेदार की हत्या कर डाली.

राजस्थान में कांग्रेस के वरिष्ठ नेता सीपी जोशी चुनाव प्रचार करते-करते जाति के उस आख्यान तक चले गए, जिससे पिंड छुड़ाने के लिए यह देश पिछले ढाई सौ साल से संघर्ष कर रहा था. जोशी ब्राह्मणों की उस द्रोणाचार्य परंपरा के साथ खड़े थे जो शिष्य बनाने से पहले योग्यता की जगह जाति देखा करती थी.

भाजपा के तीन मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, वसुंधरा राजे और रमन सिंह महाभारत के उन तपे हुए योद्धाओं की तरह थे, जिनके नाम के आगे बड़ी विजयों की पूरी श्रृंखला थी, लेकिन उन्हें पता था कि आज इस धर्मयुद्ध में वे पिछले पांव पर हैं. किसी को पता था कि कर्ण की तरह उनका रथ का पहिया जमीन में धंसने वाला है, तो कोई द्रोणाचार्य की तरह जानता था कि ह्यनरो व, कुंजरो वह्न का नारा उन्हें कभी भी भ्रमित करते गर्दिश में डाल देगा. उनके कई रणनीतिकार मामा शल्य की भूमिका में चले गए थे, जो रथ तो हांक रहे थे, लेकिन उनका मन विरोधी के साथ मिला हुआ था.

जैसे-जैसे चुनाव आगे बढ़ता गया, महाभारत और खूंखार होती चली गई. शरद यादव, नवजोत सिंह सिद्धू और कुछ दूसरे नेता तकरीबन उस फूहड़ भाषा का इस्तेमाल करने लगे, जैसी भाषा महाभारत काल में शिशुपाल बोला करता था. शिशुपाल आखिर क्या है, वह अभद्रता और

गाली-गलौज की सारी सीमाएं तोड़ने के बाद दंडित किया जाने वाला पात्र ही तो है.

जब दोनों पार्टियों ने टिकट वितरण किया तो भाई-भाई को निपटाने की कोशिश करने लगा. दोनों तरफ से लाक्षागृह बनाए गए ताकि विरोधी को रण में उतरने से पहले ही घर में खाक कर दिया जाए. मोतीलाल वोरा जैसे बुजुर्ग नेता महाभारत के बुजुर्गों की तरह घर पर बैठकर ही संजय के मुख से युद्ध का हाल सुनते रहे. यहीं उन्हें पता चला कि कई बड़े दिग्गज नेता चुनाव में अपने बागियों के कारण उसी तरह फंस गए हैं, जिस तरह इच्छामृत्यु का वरदान हासिल होने के बावजूद पितामह भीष्म फंस गए थे. कई नेताओं की दशा धृतराष्ट्र की तरह हुई, जहां वे पुत्रमोह में अपने जन्मभर की कमाई गंवा बैठे.

जब वोटिंग का दिन आया और लोग बड़ी संख्या में वोट डालने उतरे तो लगा कि अब दोनों सेनाएं आमने-सामने आ गई हैं. बस फर्क इतना था कि इन सेनाओं को जीत के लिए तीर नहीं, तर्जनी चलानी थी. वोटिंग शांतिपूर्ण हुई और वोटिंग के बाद ईवीएम को लेकर बहुत आरोप-प्रात्यारोप सामने नहीं आए. कुछ जगह ईवीएम देर से पहुंचने या किसी नेता के नजदीक बने रहने की खबरें जरूर आईं. लेकिन दृश्य इतना भयानक कभी नहीं होने पाया कि अभिमन्यु वध जैसी नृशंष घटना हो पाती।

बहरहाल जब नतीजे सामने आए तो कांग्रेस को राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में शानदार जीत मिल गई. जीत इसलिए और बड़ी हो गई कि ये तीनों राज्य बीजेपी के हाथ से कांग्रेस की झोली में आए. कांग्रेस ने मिजोरम का अपना गढ़ गंवा दिया और तेलंगाना में वापसी की उम्मीद भी जाती रही. लेकिन कांग्रेस को इस बात की तसल्ली रही कि सभी पांच राज्यों में से हर राज्य में उसे बीजेपी से ज्यादा सीटें मिलीं. यानी हर राज्य में वह बीजेपी पर भारी पड़ी.

रोमांचक चुनाव परिणाम के बाद जल्द ही मुख्यमंत्रियों का राजतिलक हो जाएगा. इस तरह सत्ता का राजसूय यज्ञ पूरा होगा.

लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि बहुत ही कर्कश और आक्रामक भाषा में लड़ा गया चुनाव अंततः बहुत शालीन भाषा में समाप्त हुआ. जीत के बाद पहली बार मीडिया के सामने आए राहुल गांधी ने जिन लोगों से हार खाई उनको जीत की बधाई दी और जिन लोगों को उन्होंने परास्त किया उनके कामकाज की तारीफ की. राहुल इतने विनम्र नजर आए जितना कि जवाहरलाल के किसी वंशज को होना चाहिए।

उनके घंटे भर बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ट्वीट कर कांग्रेस और दूसरे विजेताओं को जीत की बधाई दी. उनकी भाषा पूरी तरह संयत, शालीन और गरिमापूर्ण थी. एक कदम आगे बढ़कर मोदी ने कहा कि चुनाव में हार-जीत चलती रहती है. दोनों नेताओं के इस बयान के साथ ही महाभारत का युद्ध अपने शांति पर्व में पहुंच गया. शांति पर्व यानी महाभारत का वह समय जब युद्ध समाप्त होने के बाद बचे हुए लोग मनुष्य और रिश्तेदार की तरह एक-दूसरे से मिलते हैं और भविष्य की नींव रखने की तैयारी करते हैं।

जब राहुल और मोदी विनम्र हो गए तो रमन, राजे और चौहान भी नब गए. उन्होंने गरिमापूर्ण ढंग से इस्तीफा दिया. दोनों पक्षों ने एक-दूसरे से अच्छे लहजे में बातें कीं. हां, आखिरी में जब भाजपा नेता नरोत्तम मिश्रा ने बहुमत न मिलने के बाद मध्य प्रदेश में सरकार बनाने का दावा किया तो लगा कि क्या वे महाभारत के अंत में अश्वत्थामा जैसी भूमिका निभाने वाले हैं. लेकिन जल्द ही शिवराज ने घोषणा कर दी कि वे संख्याबल के सामने सिर झुकाते हैं. इस तरह उत्तरा के गर्भस्थ शिशु की तहर मध्य प्रदेश की भावी सरकार की भ्रूण हत्या का खतरा टल गया।

अंततः पांच राज्यों की महाभारत शालीनता के शांतिपर्व के साथ समापन की ओर बढ़ गई है. तीन महीने बाद लोकसभा चुनाव की तैयारी में यह फिर शुरू से शुरू होगी. कौन जाने उस समय कृष्ण को रणछोड़ बनना पड़े या फिर अभिमन्यु को चक्रव्यूह भेदते हुए वीरगति को प्राप्त होना पड़े।

आरबीआई और सरकार में समझौता !

भारतीय रिजर्व बैंक और केंद्र सरकार के बीच सुलह हो गई दिखती है। 19 नवंबर की आरबीआई बोर्ड की बैठक से पहले ऐसा लग रहा था कि सरकार और आरबीआई के बीच जबरदस्त विवाद होगा। यहां तक कहा जा रहा था कि अगर आरबीआई के गवर्नर और उनके डिप्टी गवर्नरों ने सरकार की बात नहीं मानी तो सरकार आरबीआई कानून की धारा सात का इस्तेमाल करेगी। अगर सरकार ऐसा करती तो गवर्नर उर्जित पटेल और डिप्टी गवर्नर विरल आचार्य इस्तीफा दे सकते थे। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ।

ऐसा कुछ नहीं हो और टकराव ज्यादा नहीं बढ़े यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ दिन पहले ही उर्जित पटेल ने दिल्ली आकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और वित्त मंत्री अरुण जेटली से मुलाकात कर ली थी। उसके बाद ऐसे संकेत मिलने लगे थे कि दोनों बीच का रास्ता निकालने पर सहमत हो गए हैं। सो, 19 नवंबर को हुई बोर्ड की बैठक में बीच का रास्ता निकाल लिया गया। रिजर्व बैंक छोटे व लघु उद्यमों के लिए कर्ज की उपलब्धता बढ़ाने पर सहमत हो गया तो साथ ही केंद्रीय बैंक के कैपिटल फ्रेमवर्क यानी पूंजी ढांचे पर विचार की भी सहमति बन गई।

इसके लिए एक कमेटी बनाने का फैसला हुआ, जिसकी सिफारिशों के आधार पर सरकार और बोर्ड आगे बढ़ेंगे। बोर्ड की बैठक के बाद तत्काल यह कहा जा रहा है कि कारोबारी बैंकों को करीब 14 हजार करोड़ रुपए उपलब्ध होंगे। यानी उनके लिए कर्ज बांटना आसान होगा। सरकार की असली चिंता यहीं थी कि चुनाव से पांच महीने पहले अगर लोगों को कर्ज मिलने बंद हो गए तो क्या होगा? आरबीआई ने यह चिंता दूर कर दी है।

केंद्र सरकार बार बार कहती है कि देश की आर्थिकी का बुनियादी ढांचा बहुत मजबूत है। पर आरबीआई के विवाद से यह जाहिर हुआ है कि असल में ऐसा नहीं है।

अगर बुनियादी ढांचा मजबूत होता तो चुनाव से पांच महीने पहले सरकार को इस बात के लिए दबाव नहीं बनाना होता कि रिजर्व बैंक अपना आरक्षित कोष कम करे। पहले तो यह खबर थी कि सरकार सीधे रिजर्व बैंक के आरक्षित कोष में से तीन लाख 60 हजार करोड़ रुपए लेना चाहती है ताकि उसे कथित विकास के काम में लगाया जा सके। जब इस पर विवाद हुआ तो पूंजी ढांचा बदलने की बात आई। अगर सरकार को रिजर्व बैंक का पूंजी ढांचा बदलना था तो यह शुरू में ही किया जाना था।

सरकार के कार्यकाल के बिल्कुल आखिर में आकर ऐसा किया जा रहा है, इससे ही सरकार की मंशा पर सवाल उठे हैं। गौरतलब है कि अभी रिजर्व बैंक का आरक्षित कोष 27-28 फीसदी है और केंद्र सरकार चाहती है कि इसे 15-16 फीसदी या उससे भी कम पर लाया जाए। आरक्षित कोष कितना हो इस बारे में फैसला कमेटी की सिफारिशों के बाद होगा। पर इतना तय है कि इसे घटाया जाएगा। अगर एक तिहाई की कमी की जाती है तो रिजर्व बैंक के नौ लाख 60 हजार करोड़ रुपए के आरक्षित कोष में से

सरकार को तीन लाख 20 हजार करोड़ रुपए मिल जाएंगे।

असल में रिजर्व बैंक और भारत सरकार का रिश्ता हमेशा तनाव वाला रहा है। पर पहले माना जाता था कि रिजर्व बैंक का काम महंगाई को काबू में रखना और मुद्रा को स्थिर रखना है। इतना सीमित काम होने की वजह से सरकार के साथ कम टकराव होता था। सिर्फ नीतिगत ब्याज दरों को लेकर खींचतान होती थी। मुद्रा को स्थिर रखने और महंगाई को काबू में रखने के लिए बैंक नीतिगत ब्याज दरों पर अपनी पकड़ रखती थी और सरकार चाहती थी कि बैंक इसे कम करे ताकि विकास की गतिविधियों में तेजी आई। पर अब केंद्रीय बैंक की भूमिका बदल रही है और बड़ी भी हो रही है। उसे सिर्फ मुद्रा और महंगाई के बारे में नहीं सोचना है, बल्कि व्यापक अर्थों में देश की अर्थव्यवस्था के बारे में सोचना है। दुनिया के कई देशों के केंद्रीय बैंक ने अपनी भूमिका बढ़ाई है। तभी टकराव के मुद्दे भी बढ़े हैं। भारतीय रिजर्व बैंक ने भी मुद्रा और महंगाई से आगे बढ़ कर देश की अर्थव्यवस्था की सेहत, बाजार की स्थिरता, अंतरराष्ट्रीय साख आदि के बारे में विचार किया और आरक्षित अनुपात कम करने के प्रयास पर आपत्ति की। पर अब वह लिए तैयार हो गई है क्योंकि सरकार का एकमात्र फोकस इस पर है कि वह कैसे विकास होता हुआ दिखाए। यह तभी संभव है, जब बाजार में नकदी उपलब्ध हो।

यूपीए सरकार के समय महंगाई काबू में रखने के लिए करीब डेढ़ दर्जन बार नीतिगत ब्याज दरों में बढ़ोतरी हुई हुई थी। इसका असर बाद के सालों में विकास दर पर पड़ा था। आरबीआई का पैसा लेने के लिए यूपीए की सरकार ने ही यह पूरा लाभांश ले लेने का नियम बनाया था। पर केंद्र की मौजूदा सरकार इससे भी आगे बढ़ गई है। वह आरक्षित अनुपात कम करा रही है और तमाम एनपीए के बावजूद कर्ज देने की प्रक्रिया को आसान रखने पर जोर दे रही है ताकि विकास दर कम नहीं होने पाए।

हैरानी की बात यह है कि पेट्रोल, डीजल पर उत्पाद शुल्क बढ़ा कर, विनिवेश के जरिए, आय कर की वसूली बढ़ा कर, जीएसटी के जरिए सरकार इतना राजस्व वसूली का ढिंढोरा पीट रही है और इसके बावजूद उसकी नजर आरबीआई के पैसे पर है! इससे ऐसा लग रहा है कि अर्थव्यवस्था में किसी न किसी स्तर पर कुछ बड़ी गड़बड़ी है, जिसे सरकार बता नहीं रही है।

नाम में क्या रखा है ?

शेक्सपीयर के महान नाटक 'रोमियो एंड जूलियट' में जूलियट ने यह अमर संवाद बोला था झ नाम में क्या रखा है, गुलाब को किसी नाम से पुकारो, उसकी खुशबू वैसी ही प्यारी रहेगी। जूलियट ने इसी संवाद के क्रम में यह भी कहा था कि 'नाम एक कृत्रिम और अर्थहीन मान्यता है'। पर भारत के नेताओं ने शेक्सपीयर को गलत साबित कर दिया! यह भी एक संयोग है कि हम भारतीय लोग शेक्सपीयर के मुकाबले में तुलसीदास के साहित्य को रखते हैं और इस मामले में तुलसीदास सही साबित हो गए। तुलसीदास ने रामचरितमानस में लिखा है - कलियुग केवल नाम अधारा, सुमिर सुमिर नर उतरहीं पारा। तुलसीदास को लग गया था कि कलियुग में राम नाम ही आधार होगा, जिसके सुमिरन से जीवन की वैतरणी के पार उतरा जा सकता है। भारतीय जनता पार्टी के नेताओं ने तुलसीदास की इस लाइन की गांठ बांधी है। उन्होंने चुनावी वैतरणी पार करने के लिए हर बार राम नाम का सुमिरन किया है। अब वे नाम जाप की राजनीति का विस्तार कर रहे हैं। इलाहाबाद का नाम प्रयागराज कर दिया है और फैजाबाद का नाम अयोध्या कर दिया है। यह सिलसिला तब तक चलेगा, जब तक नाम जाप की महिमा का प्रसाद मिल नहीं जाता है।

आगे बढ़ने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि सिर्फ भाजपा के नेता ही नाम की महिमा को चुनावी पतवार नहीं बना रहे हैं। दूसरी पार्टियों के नेताओं ने भी शेक्सपीयर को गलत साबित करने का भरपूर प्रयास किया है। हाल ही में दिल्ली की आम आदमी पार्टी की नेता आतिशी मारलेना ने अपना नाम बदल लिया क्योंकि उनको लग रहा था कि मारलेना उपनाम से उनके ईसाई होने का आभास हो रहा है, जिसका भाजपा दुरुपयोग कर सकती है। उन्होंने अपना नाम आतिशी कर लिया और कई जगह आतिशी सिंह लिखा जाने लगा है। इसी तरह पिछले लोकसभा चुनाव में चांदनी चौक के आप प्रत्याशी आशुतोष का नाम अचानक आशुतोष गुप्ता हो गया था। बहरहाल, सरकार में आने के बाद भाजपा योजनाओं और संस्थाओं के नाम बदल रही थी अब वह शहरों के नाम बदलने लगी है। शहरों के नाम पहले भी बदले गए हैं। पर उनका मकसद परंपरा और स्थानीयता की भावना को संतुष्ट करना था। जैसे बंगलोर का नाम बेंगलुरू कर दिया गया है, मद्रास चेन्नई हो गया, कलकत्ता कोलकाता हो गया या बांबे का नाम मुंबई कर दिया गया। मशहूर कन्नड़ लेखक यूआर अनंतमूर्ति ने बंगलोर का नाम बदले जाने पर कहा था कि स्थानीय लोगों के लिए यह हमेशा बेंगलुरू ही था वैसे ही जैसे बंगाली लोगों के लिए कलकत्ता हमेशा कोलकाता ही था। यह उच्चारण, भाषा या ज्यादा से ज्यादा स्थानीय अस्मिता का मुद्दा था। अगर कोई राजनीतिक मकसद था भी तो वह बहुत मामूली सा था। पर इलाहाबाद का नाम प्रयागराज करना या फैजाबाद का नाम अयोध्या करना या अहमदाबाद का नाम बदल कर कर्णावती करने का प्रस्ताव विशुद्ध रूप से राजनीतिक पहल है। इन शहरों को धार्मिक प्रतीक बना दिया गया और इस बात को दरकिनार कर दिया गया कि अयोध्या का अस्तित्व मिटा कर फैजाबाद नहीं था। फैजाबाद के साथ साथ अयोध्या भी थी। जैसे इलाहाबाद के साथ ही प्रयाग भी था। वहां गंगा, यमुना और मिथकीय सरस्वती का संगम है और इसलिए प्रयाग भी है। इलाहाबाद के कारण प्रयाग के अस्तित्व पर सवाल नहीं था। इन दोनों नामों का सह अस्तित्व था। शहरों का यह सह अस्तित्व भारत की परंपरा का हिस्सा है। भारत अपने आप में इसकी मिसाल है। इंडिया और हिंदुस्तान के साथ साथ भारत का भी अस्तित्व है। भारत का संविधान कहता है झ इंडिया दैट इज भारत! यह प्रयास तो नहीं हो रहा है कि अब इंडिया और हिंदुस्तान नहीं होगा, सिर्फ भारत होगा? या अब सिर्फ नई दिल्ली होगी न्यू देल्ही नहीं लिखा-बोला जाएगा? राष्ट्रीय राजधानी के ये दोनों नाम साथ साथ चलते हैं। अब सवाल है कि नाम बदलने के प्रतीकात्मक काम क्यों हो रहा है और इससे क्या हासिल होना है? हासिल का पता बाद में चलेगा पर क्यों हो रहा है इसका कुछ कुछ अंदाजा लग रहा है। असल में किसी भी सरकार के लिए यह सबसे आसान काम होता है। जब सरकारें अपने बुनियादी लक्ष्य को हासिल करने में विफल हो जाती हैं तो वह ऐसे प्रतीकात्मक काम करती हैं। सरकार रोजगार देने में नाकाम रही है, शिक्षा की हालत दिन ब दिन खराब होती जा रही है, स्वास्थ्य सेवाओं में कोई गुणात्मक सुधार नहीं हुआ है, बुनियादी सुविधाएं और रोजमर्रा की जरूरत की चीजें महंगी होती जा रही हैं, भ्रष्टाचार की स्थिति में रत्ती भर भी सुधार नहीं हुआ है तो इन सबसे ध्यान हटाने के लिए नाम बदलने का प्रतीकात्मक काम हो रहा है।

पहले मुजफ्फरनगर, अब बुलंदशहर, चुनाव से पहले यूपी को किसकी नजर लगती है?

उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर में जो घटनाएं हुईं, वो पूरी योजना के साथ हुईं. इससे राजस्थान में मतदान से ठीक पहले सांप्रदायिक तनाव बढ़ा. बुलंदशहर मामले की शुरूआती जांच में यह बात सामने भी आई थी, भले ही बाद में इसे ट्विस्ट देने की कोशिश हुई. आखिर यूपी के लोग ऐसे उकसावे में क्यों फंस जाते हैं, वह भी चुनाव करीब होने पर?

हाल के सालों में राज्य ने मुजफ्फरनगर दंगे देखे, जिससे पश्चिमी उत्तर प्रदेश में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच दरार बढ़ी. मुजफ्फरनगर दंगे अगस्त-सितंबर 2013 में हुए थे. उसके बाद 2014 लोकसभा चुनाव के पहले तक पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कई सांप्रदायिक झड़पें हुईं. सच तो यह है कि 2013 में देश भर में सांप्रदायिक हिंसा की घटनाओं में 18 पर्सेंट की बढ़ोतरी हुई थी, जिनमें से 30 पर्सेंट अकेले उत्तर प्रदेश में हुई थीं.

ये आंकड़े क्या संकेत देते हैं?

क्या इसकी वजह यूपी में मुसलमानों की अच्छी-खासी आबादी है, जिसे राजनीतिक तौर पर इग्नोर नहीं किया जा सकता? जहां 30 पर्सेंट वोट शेयर से चुनाव में हार-जीत का फैसला हो जाए, वहां कुछ पर्सेंट वोट पाने के लिए सांप्रदायिक ध्रुवीकरण कारगर हथियार हो सकता है।

इसलिए चुनाव से पहले हमेशा यहां दंगे कराने की कोशिशें होती हैं. लेकिन यूपी की जनता इस राजनीतिक खेल में फंसती क्यों है? क्या इसकी वजह हिंदुओं और मुसलमानों के बीच दिलों की दूरी बढ़ना तो नहीं है? कुछ आंकड़े तो ऐसा ही संकेत दे रहे हैं.

2014 से पहले मुसलमानों का राजनीतिक उभार

जाने-माने पॉलिटिकल साइंटिस्ट ए के वर्मा ने 2012 के स्थानीय निकाय चुनावों का विश्लेषण करते हुए लिखा था, 'उत्तर प्रदेश में जून-जुलाई 2012 के बीच हुए शहरी निकाय चुनावों से शहरी गवर्नेंस में मुसलमानों की चौंकाने वाली वापसी का संकेत मिलता है.' उन्होंने यह भी कहा था, '2007 में यूपी विधानसभा में 13.8 पर्सेंट (403 में से 56 विधायक) मुस्लिम चुने गए थे. 2012 में इनकी संख्या बढ़कर 17.12 पर्सेंट (403 में से 69) हो गई थी. 2004 संसदीय चुनाव में यूपी से 13.74 पर्सेंट (80 में से 11 सीटें) मुस्लिम उम्मीदवार चुने गए थे, लेकिन 2009 में उनकी संख्या घटकर 8.75 पर्सेंट (80 में से 7) रह गई. यूपी में 18.5 पर्सेंट मुसलमान हैं. लोकसभा चुनाव में उनका प्रतिनिधित्व आबादी से कम रहा है. हालांकि, हाल में हुए शहरी निकाय चुनावों में उनकी नुमाइंदगी इससे अधिक यानी 31.5 पर्सेंट हो गई थी.'

सारे आंकड़े उनके ईपीडब्लू में छपे आलेख से लिए गए हैं. विधानसभा (2017 से पहले वाले) और निकायों में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व बढ़ना शायद उनकी आर्थिक ताकत बढ़ने की भी निशानी है. वैसे इसके यूपी के डेटा तो अवेलेबल नहीं हैं, लेकिन देश भर के आंकड़ों से यही संकेत मिल रहे हैं।

हाल के सालों में दूसरों के मुकाबले तेजी से बढ़ा है मुस्लिम मध्यवर्ग

नेशनल सैंपल सर्वे ऑर्गनाइजेशन (एनएसएसओ) डेटा के आधार पर समाजशास्त्री संध्या कृष्णन और नीरज हटेकर ने अलग-अलग सामाजिक वर्ग के हिसाब से 1999-2000 से 2011-12 के बीच नए मध्य वर्ग की गणना की है. जो लोग रोजाना 130 से 650 रुपये खर्च करते हैं, उन्हें स्टडी में नए

मध्य वर्ग का हिस्सा माना गया. एनएसएसओ डेटा के मुताबिक, 1999-2000 से 2011-12 के बीच मुस्लिम मध्य वर्ग में 86 पर्सेंट की बढ़ोतरी हुई, जबकि इस दौरान नए मध्य वर्ग में हिंदुओं की संख्या भी 76 पर्सेंट बढ़ी. हालांकि, हिंदू रसूखदार जातियों (गैर-ओबीसी, गैर-अनुसूचित जाति और गैर-अनुसूचित जनजाति) के 45 पर्सेंट लोग ही नए मध्य वर्ग में शामिल हो सके.

मुसलमानों को पारंपरिक रूप से गैर-कृषि क्षेत्र से जुड़े होने का मिला फायदा

शायद इसी वजह से हाल के वर्षों में मुसलमानों का प्रदर्शन तुलनात्मक तौर पर बेहतर रहा है. मैंने अपने पुराने लेख में लिखा है कि 'भारतीय मुसलमानों की सामाजिक-आर्थिक हैसियत के बारे में सच्चर कमेटी की रिपोर्ट से इन सवालों के जवाब मिलते हैं, जो अपनी तरह का सबसे प्रामाणिक और व्यापक डेटा है.' इस रिपोर्ट में बताया गया है, 'दूसरे समुदाय की तुलना में बहुत कम मुसलमान कृषि क्षेत्र से जुड़े हैं, लेकिन मैन्यूफैक्चरिंग और ट्रेड में उनकी भागीदारी (खासतौर पर पुरुषों) दूसरे सामाजिक धार्मिक समूहों से काफी ज्यादा है. कंस्ट्रक्शन वर्क में भी उनकी भागीदारी अच्छी-खासी है.' रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि कंस्ट्रक्शन के अलावा थोक और खुदरा व्यापार, सड़क मार्ग से सामान लाने-ले जाने, ऑटो रिपेयर, तंबाकू उत्पादों की मैन्यूफैक्चरिंग, टेक्सटाइल व अपैरल और फैब्रिकेटेड मेटल प्रॉडक्ट्स कारोबार से काफी मुसलमान जुड़े हुए हैं.

दिलचस्प बात यह है कि उदारीकरण के बाद कृषि क्षेत्र की ग्रोथ सीमित रही है, जबकि मैन्यूफैक्चरिंग और सर्विसेज (खासतौर पर ट्रेड) में तेज बढ़ोतरी हुई है. चूंकि मुसलमान पारंपरिक रूप से गैर-कृषि क्षेत्रों से जुड़े रहे हैं, इसलिए आर्थिक सुधारों का फायदा उन्हें दूसरे समुदाय की तुलना में ज्यादा मिला है. इसी वजह से दूसरे वर्गों की तुलना में मध्य वर्ग से ज्यादा मुसलमान जुड़ रहे हैं.

सांप्रदायिक टकराव की वजह मुसलमानों से जलन है ?

दिलों की दूरी और सांप्रदायिक टकराव की वजह मुसलमानों से जलन है ? ऐसा लगता है कि एक सामाजिक समुदाय के तुलनात्मक तौर पर बेहतर राजनीतिक और आर्थिक प्रदर्शन से सामाजिक बैलेंस बदला. मुसलमानों को संदेह की नजर से देखा जाने लगा और कई बार यह उनके प्रति नफरत में बदल गई. इसी वजह से जिन इलाकों में दिलों की दूरियां रही हैं, वहां आपको मुसलमानों को लेकर अपमानजनक बातें सुनने को मिलती हैं. कुछ साल पहले पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मेरठ में मुझसे एक हिंदू बिजनेसमैन ने कहा था, 'इनकी औकात क्या थी? लेकिन अब इनके बच्चे बढ़िया मोटरसाइकिल पर बैठकर मॉल जाते हैं और हमारी लड़कियों से आंखें लड़ाते हैं.'

देश के कई इलाकों में आपको मुसलमानों के प्रति ऐसी भाषा सुनने को मिल जाएगी. यूपी के कुछ इलाकों में मुसलमानों को लेकर इस तरह की कड़वाहट आपको साफ दिखेगी. हिंदू और मुसलमान दोनों ही तरफ चंद मौकापरस्त लोग इसे भुनाने के लिए बेताब रहे हैं. इसलिए राजनीतिक वर्ग चुनाव से पहले सांप्रदायिक तनाव बढ़ाने में सफल होता है. कड़े मुकाबले वाले उत्तर प्रदेश में राजनीतिक पार्टियों के लिए सांप्रदायिक ध्रुवीकरण से कुछ पर्सेंटेज का वोट स्विंग 'मुनाफे का सौदा' है. इसलिए देश की सबसे अधिक आबादी वाले राज्य में बार-बार मुजफ्फरनगर और बुलंदशहर दोहराए जाते रहे हैं।

'राम' वोट पाने का साधन भर

किसी ने सही कहा कि जो आपका काम नहीं है, वह काम न करे, वर्ना बबार्दी के लिए उतना ही काफी है। मोदी सरकार ने चार सालों में यही किया है। साढ़े चार साल में जहां सरकार को कारगर कदम उठाने चाहिए थे, उसने नहीं उठाए और बेकार के कामों की लिस्ट इतनी लंबी होती गई कि अब स्थिति संभाले नहीं संभल रही है। जवाहरलाल नेहरू सत्रह साल प्रधानमंत्री रहे। फिर भी उन्होंने कभी वह काम नहीं किया जो उन्हें नहीं करना चाहिए था। हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री ऐसे हैं जो प्रधानमंत्री के काम के अलावा जितने काम है, सब करते हैं।

स्वच्छता एक ऐसी चीज है, जिसे प्रधानमंत्री के भाषण की जरूरत नहीं हैं। हर आदमी अपना घर साफ रखता है। आप कहते हैं मोहल्ला को साफ रखो, गली को साफ रखो। ठीक बात है, पर ये काम पंचायत का है, नगर पालिकाओं का है। इसमें प्रधानमंत्री का लालकिले से बोलने का कोई काम नहीं है। सरकार ने कहा कि शौचालय बनना चाहिए, बिना समझे कि हमारे गांव के लोग शौचालय कैसे इस्तेमाल करेंगे, यदि पानी ही नहीं है। पीने के पानी की कमी है तो शौचालय का पानी कहां से आएगा।

इसमें बुद्धि लगाने की जरूरत नहीं है। सरकार ने कह दिया कि शौचालय बनना चाहिए, पैसा आवंटन कर दिया। सरकार ने कहा कि एलईडी बल्ब इस्तेमाल कीजिए। मैं ये बिल्कुल नहीं कह रहा हूं कि ये सारी चीजें नहीं होनी चाहिए। मैं ये कह रहा हूं कि ये प्रधानमंत्री का काम नहीं है। एलईडी बल्व नॉर्मल बल्व की जगह लगे, उससे बिजली बचती है और कीमत अगर कम हो तो लोग उसका इस्तेमाल करेंगे ही। इसमें प्रधानमंत्री की क्या भूमिका है? बाकी लोग क्या कर रहे हैं? मुख्यमंत्री क्या कर रहे हैं? इसका मतलब कोई काम नहीं कर रहा है। सिर्फ प्रधानमंत्री काम कर रहे हैं। तो फिर बर्खास्त कीजिए सबको।क्या पूरा देश अकेले प्रधानमंत्री चलाएंगे? क्या उन्हें देश पर एकाधिकार चाहिए? असल में ये सरकार भारत के संविधान को ही लागू करने में नाकामयाब रही है। सरकार का काम है कि वह आर्थिक स्थिति ठीक रखे, कीमत को नियंत्रण में रखे ताकि गरीबों को राहत मिले। ऐसा कोई काम ये सरकार नहीं कर रही है। पेट्रोल का मूल्य सौ रुपए पहुंच रहा है, खाद्यान्न की कीमत आसमान छू रही है। लेकिन किसान को उचित मूल्य नहीं मिल रहा है। क्योंकि बिचौलिए पैसा खा जाते हैं। मैं नहीं कहता की ये सिस्टम इसी सरकार ने शुरू किया। ये शुरू से चल रहा है। लेकिन, इस सरकार ने भी इस सिस्टम को ठीक करने का काम नहीं किया।

अब अमित शाह का भाषण सुनिए। वे बोलते हैं कि कांग्रेस के राज में ये हुआ, वो हुआ। प्रधानमंत्री ने खुद बोला है कि विपक्ष का काम है झूठ बोलना। जबकि प्रधानमंत्री खुद एके-47 की गति से झूठ बोलते हैं। भारत एक ऐसा देश है, जहां रिजेक्ट होने के बाद दोष निकाला जाता है। इंग्लैंड में या अमेरिका में 300 साल की डेमोक्रेसी है। वहां आज का राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन की गलती नहीं निकालता है। हां, हल्के से डेमोक्रेटिक पार्टी का जिक्र करता है। आप भी कांग्रेस पार्टी की आलोचना कीजिए, इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

लेकिन भाजपा की और मोदी जी की सारी समस्या नेहरू जी से शुरू होती है। पटेल और बोस

इनके लिए खुदा हो गए। कैसे हो गए? इनका पढ़ने-लिखने से कोई वास्ता तो है नहीं। नेताजी बोस की थ्योरी थी कि ब्रिटिश को भारत से हटाने के लिए हिटलर की मदद ली जाए। हिटलर इस सरकार को सूट करता है क्योंकि इनका भी मिजाज वही है। कोई भी आदमी नेताजी से सहमत नहीं हो सकता कि एक बुरी चीज हटाने के लिए उससे भी बड़ी बुरी चीज की मदद लें। ये बातें तर्कसंगत नहीं है। मैं भी नेताजी का प्रशंसक हूं।

उन्होंने बहादुरी दिखाई। आजाद हिंद फौज शब्द उर्दू और हिन्दी का मिश्रण है। भाजपा वालों को समझना चाहिए कि नेताजी क्या थे? वे सूरज थे और भाजपा वाले उनको दीया दिखाने की कोशिश कर रहे हैं। कभी विपक्ष की शान हुआ करते थे आडवाणी जी और अटल जी। मैं कभी आडवाणी जी से सहमत नहीं था, क्योंकि उनको मंदिर बनाना था। लेकिन उनका संयम, सभ्यता, भाषा पर नियंत्रण उन्हें एक बेहतर नेता बनाता था। आडवाणी जी कहते थे कि अगर हमको कम वोट मिलते हैं तो हम विपक्ष में बैठेंगे। मोदी जी को ये बर्दाश्त नहीं होता है। ये पैसा देकर, डरा कर, धमका कर विधायकों को अपने पाले में ला कर किसी तरह सरकार बनाने में यकीन करते है। आज भाजपा ने साबित कर दिया कि वे भले दीन दयाल उपाध्याय या श्यामा प्रसाद मुखर्जी का नाम लेंगे लेकिन आचरण ठीक उसके उलट करेंगे।

भारत पूंजीपतियों का देश नहीं है। इस देश का इतिहास पढ़िए। यहां किसी राजा-महाराजा, सामंतों की पूजा कभी नहीं हुई है। यहां फकीरों की पूजा हुई है। चाहे नानक हों, कबीर हों, तुकाराम हों, ज्योतिबाफुले हों। जयप्रकाश नारायण नहीं होते तो इंदिरा गांधी चुनाव नहीं हारती। कुछ तो सीखिए इतिहास से। इस देश में विनम्रता, सादगी, खुद पर कम खर्चा करना, उदार होना, गरीबों को ऊपर उठाना, यही सब इस देश की ताकत है। लेकिन भाजपा तो आज कांग्रेस से भी आगे निकल गई है। ये तो बिजनेसमैन को भी लाइसेंस नहीं दे रहे हैं।

तीन या पांच घरानों को ही लाइसेंस मिल रहा है। भाजपा, अंबानी, अडानी और तीन-चार और घराने मिलकर सब कर रहे हैं। भाजपा ने साढ़े चार साल में भय का वातावरण बना दिया है। हाल ही में वीर सांघवी एक इंटरव्यू ले रहे थे। उसमें उन्होंने कहा कि आम आदमी की आर्थिक हालत खराब है, लेकिन डर का वातावरण है। इस वजह से उद्योगपति, व्यवसायी बोलने को तैयार नहीं है कि उनके कामकाज की हालत खराब है। वे सब अमित शाह से डरते है।

अब तो साफ हो गया है कि अमित शाह सीधे

सीबीआई को नियंत्रित करना चाह रहे थे। सीबीआई के जरिए वे सबको डरा-धमका रहे थे, कहां आ गए है हमलोग? यूगांडा या जिम्बाम्बे से ज्यादा दूर नहीं है हम। मैं कहता हूं कि जनता को आप जानते नहीं हैं। यहां पर क्रांति हो जाएगी, जिम्बाम्बे की तरह इलेक्शन से छेड़खानी मत करिए। भाजपा के लिए मेरी राय आज भी यही है कि हारना-जीतना लगा रहता है। अगर हार गए तो फिर मेहनत करके जनता का विश्वास जीतिए और सत्ता में आ जाइए। लेकिन आपने (भाजपा) जिस तरह गोवा, मणिपुर में सरकार बनाया, वैसे ही अगर दिल्ली में बनाने की कोशिश करेंगे तो गंभीर नतीजा भुगतना होगा। ऐसा कर के भाजपा, आरएसएस के 93 साल की मेहनत पर पानी फेर देगी। मुझे पता नहीं है कि मोहन भागवत जी क्या सोच रहे हैं। 93 साल इन्होंने मेहनत की ताकि कुछ संस्कार ला सके, कुछ परंपरा बना सके। लेकिन, ये सरकार इनकी मेहनत और सोच पर पानी फेर रही है।

आरएसएस चाहती है कि अयोध्या में एक मंदिर बने, क्योंकि रामायण में माना जाता है कि वहां राम का राज था। रामायण की अयोध्या वही है, जो आज की अयोध्या है। रामायण कोई इतिहास नहीं, माइथोलॉजिकल गाथा हैं। ऐसी किसी गाथा को इतिहास में परिवर्तित करना आसान काम नहीं है और करना भी नहीं चाहिए। लेकिन उनकी मंशा यह है कि राम का एक भव्य मंदिर बने, क्योंकि हिन्दुओं के दिल में राम बसे हुए हैं। लेकिन भाजपा चाहती है कि राम का नाम ले कर हम सरकार में आ जाएं। दोनों का उद्देश्य उल्टा है। वे हर पांच साल में राम को जिंदा कर देते हैं फिर पांच साल तक राम को भूल जाते हैं। अब सुप्रीम कोर्ट पर दबाव डाल रहे हैं। सुप्रीम कोर्ट को इस पचड़े में पड़ना ही नहीं चाहिए। पहले से ही हाजी अली दरगाह और सबरीमाला जैसी दो मुसीबतें सुप्रीम कोर्ट ने अपने सर पर ले रखी हैं। सुप्रीम कोर्ट का धर्म से कोई मतलब नहीं है। सुप्रीम कोर्ट सेकुलर है। क्या सुप्रीम कोर्ट बताएगा कि राम कहां पैदा हुए। मैं हिन्दू हूं और मैं इस पर सख्त आपत्ति जता रहा हूं। मुझे कोई बताने की कोशिश न करे कि राम कहां पैदा हुए और कृष्ण कहां पैदा हुए। मुझे ज्यादा मालूम है आपसे। मैंने जितना हिन्दू ग्रन्थों का अध्ययन किया है, उतना शायद इन्होंने नहीं किया होगा और मोदी जी ने तो हरगिज नहीं किया होगा। 18 प्रतिशत हिन्दू (कट्टर), जो भाजपा के समर्थक हैं, वो अचानक कहते हैं कि राम का अपमान हो रहा है। किसने कहा कि राम का भी अपमान हो सकता है। अपमान तो उसका हुआ जिसने राम के खिलाफ कुछ बोला। मान-अपमान छोटे लोगों की बात है।

राम और कृष्ण का भी मान-अपमान हो सकता है, मैं नहीं मानता। ऐसे ही लोग हिन्दुज्म को कमतर बनाएंगे। मोदी जी पूरी कोशिश कर रहे हैं कि हिन्दूज्म एक धर्म, वे ऑफ लाइफ की जगह एक मजहब बन जाए। जैसे इस्लाम, क्रिश्चिएनिटी या पारसी है। हम मजहब नहीं हैं, हम मत नहीं हैं, मत निरपेक्ष देश है। धर्मनिरपेक्ष शब्द गलत है लेकिन प्रचलित है। हमलोग सनातन देश हैं। चिरस्थायी, हजारों साल से चल रहा है और हजारों साल चलेगा।

खाली कर्जमाफी से ही किसानों का भला नहीं

पिछले दिनों दिल्ली में दो दिवसीय किसान रैली में भाग लेने पहुंचे 52 वर्षीय एक किसान की मौत हो गई। इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बाद जो जानकारी मीडिया के माध्यम से सामने आई, उसने देश में किसानों की वास्तविक स्थिति और उनसे संबंधित संकट से निपटने के सीमित दृष्टिकोण को पुनः रेखांकित कर दिया है। क्या केवल कर्ज माफी ही इस समस्या का हल है? पिछले महीने की 29 तारीख को कर्जमाफी सहित अन्य मांगों को लेकर विभिन्न राज्यों के हजारों किसान दिल्ली पहुंचे थे, जिसमें महाराष्ट्र के कोल्हापुर निवासी किरण शांतप्पा घोरवडे भी शामिल थे। एक दिसंबर की सुबह दिल्ली स्थित अंबेडकर भवन की तीसरी मंजिल से गिरने से घोरवडे मौत हो गई। वह 'स्वाभिमानी शेतकरी संगठन' नामक किसान संगठन से 15 वर्षों से जुड़े थे।

जांच में जानकारी मिली कि मृतक पर कोल्हापुर जिला कोऑपरेटिव बैंक और एक क्रेडिट सोसायटी का लगभग 6 लाख रुपये का ऋण था। इस वर्ष खेत में कीड़े लगने और बेमौसम बारिश के कारण उड़द की पूरी फसल बर्बाद हो गई। मृतक के पड़ोसी के अनुसार, 'घोरवडे बीते एक दशक से कर्ज का भुगतान नहीं होने से चिंतित था, क्योंकि उसे 2008-09 की कर्ज माफी का लाभ नहीं मिला था। घोरवडे पर कोल्हापुर जिला कोऑपरेटिव बैंक का तीन लाख बकाया था, जहां से उसने 1.2 लाख का कर्ज लिया था। इसके अतिरिक्त, अपनी जमीन गिरवी रखकर तीन लाख रुपये साहू कोऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटी से लिए थे।' क्या यह सत्य नहीं कि देश के अधिकतर किसान आज इस प्रकार के संकट से जूझते रहते है?

सितंबर 2016 में जारी सरकारी आंकड़े के अनुसार, देशभर में किसानों पर 12.6 लाख करोड़ कुल कर्ज बकाया है। वर्ष 1990 में पहली बार

राष्ट्रव्यापी किसान कर्जमाफी की घोषणा की गई थी, जिसके बाद 2008 में भी ऐसा किया गया। राज्य स्तर पर 2014 में तेलंगाना और आंध्रप्रदेश ने अपनी ऋण छूट संबंधी योजनाएं प्रारंभ की। बीते दो वर्षों में उत्तरप्रदेश सरकार 36 हजार करोड़, तो महाराष्ट्र सरकार और कर्नाटक सरकार 34-34 हजार करोड़ की कर्जमाफी योजना की घोषणा कर चुकी है। पंजाब सरकार भी चरणबद्ध तरीके से किसानों का कर्ज माफ कर रही है, जिसमें अबतक 900 करोड़ रुपये का कर्ज माफ किया जा चुका है। राजस्थान सरकार किसानों को नौ हजार करोड़ की ऋण छूट देने का दावा कर रही है। देश के अन्य राज्यों में भी किसानों ने कर्जमाफी की मांग तेज कर दी है।

देश के विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच किसानों की कर्जमाफी 'लोकलुभावन प्रतिस्पर्धा' के रूप में स्थापित हो चुका है। कौन-सी पार्टी किसानों का कितना ऋण माफ करने की घोषणा करती है, वह दल वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में उतनी ही किसान हितैषी कहलाई जाती है। स्थिति आज यह हो गई है कि कई राज्यों में किसान द्वारा कर्ज चुकाने में गिरावट आ रही है। उदाहरण स्वरूप, मध्यप्रदेश में इस वर्ष जून में सरकार को तीन हजार करोड़ से अधिक का ऋण प्राप्त हुआ था, जो जुलाई और नवंबर में घटकर क्रमशः 1804 और 261 करोड़ रह गया।

किसानों की सरकार द्वारा कर्जमाफी वास्तव में, किसी गंभीर बीमारी के ऊपरी लक्षणों का उपचार जैसा है। किसानों के संकट की जड़ें उस 'असंतुलित' व्यवस्था में है, जो गांव-देहात में रहने वाले लोगों की बढ़ती अपेक्षाओं, सीमित संसाधनों और विकास के आभाव में सिकुड़ते अवसरों के कारण उपजी है। इस 'असंतुलन' को राजनीतिक दलों के कर्जमाफी जैसे लोकलुभावन वादों ने और अधिक गहरा करने का काम किया है।

देश में कृषि क्षेत्र और किसानों की स्थिति क्या है? वर्ष 1950-51 में भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि संबंधित क्षेत्र का योगदान 51.8 प्रतिशत था और देश की दो तिहाई जनसंख्या कृषि पर आश्रित थी। कालांतर में सेवा और विनिर्माण में सुधार, औद्योगिक विकास के साथ अन्य क्षेत्र में प्रगति के कारण राष्ट्रीय आय में कृषि की हिस्सेदारी में कमी आई है। वर्तमान समय में, देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा सात दशकों में घटकर 17-18 प्रतिशत रह गया है। किंतु आजीविका के लिए कृषि पर आश्रित लोगों की संख्या में कोई बड़ी कमी नहीं आई है। देश की कुल श्रमिक आबादी का 54.6 प्रतिशत हिस्सा आज भी कृषि संबंधी

गतिविधियों में शामिल है।

कृषि मंत्रालय की ओर से जारी आंकड़ों के अनुसार, भारत में खेती योग्य जमीन वर्ष 2010-11 में 15.95 करोड़ हेक्टेयर थी, जो वर्ष 2015-16 में डेढ़ प्रतिशत घटकर 15.71 करोड़ हेक्टेयर रह गई। लघु और सीमांत किसान 84.97 प्रतिशत से बढ़कर 86.21 प्रतिशत हो गए हैं, जिनके पास कुल खेती की 47.3 प्रतिशत जमीन है। जबकि मझोले किसान 13.22 प्रतिशत है, जिनके पास कुल 43.1 प्रतिशत भूमि है। वहीं देश के बड़े किसान मात्र 0.57 प्रतिशत हैं, जिनके पास 9.04 प्रतिशत जमीनें है। इस स्थिति का सबसे प्रमुख कारण पीढ़ी-दर-पीढ़ी जमीन का बंटवारा होना है। अर्थात खेती की जमीन सीमित ही है, लेकिन उस पर किसानों और उनपर आश्रितों, जो स्वयं को भी किसान कहते है- उनकी संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। यह स्थिति कृषि क्षेत्र में छिपी 'बेरोजगारी' को उजागर करती है।

इस स्थिति का मूल कारण क्या है? पहला- देश आज उपभोक्तावाद के मकड़जाल में फंसा हुआ है, जिसे मजबूत करने में टेलीविजन की भूमिका सबसे अग्रणी है। किसान और उसपर आश्रित लोग भी स्वाभाविक रुप से टीवी के प्रचार से प्रभावित होते है और उनमें वह सभी चीजें प्राप्त करने की इच्छा जन्म लेनी लगती है, परंतु आमदनी सीमित है। दूसरा- खेती जोखिमभरा काम है, जो बहुत कुछ मौसम पर निर्भर करता है। यदि फसल बहुत अच्छी हुई तो दाम गिर जाते है, जिससे किसानों को लागत तक वसूल नहीं होती। यदि फसल खराब हो जाए, तो किसान वैसे ही बर्बाद हो जाता है। इस कारण वह कर्ज लेने लिए बाध्य हो जाता है। उपभोक्तावाद के दौर में कई किसान खेती के उद्देश्य से तो कर्ज उठाते है, किंतु कई बार पारिवारिक और सामाजिक कारणों से उसका अधिकतर हिस्सा अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने में खर्च कर देते है। इसी चक्रव्यूह में फंसने के कारण अधिकतर किसानों की हालत खराब रहती है, जिससे मुक्ति के लिए वह या तो आंदोलन के लिए विवश होता है या फिर आत्महत्या का मार्ग चुनता है।

किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में केंद्र सरकार इस वर्ष कई फसलों का न्यूनतम समर्थन मूल्य, उत्पादन लागत से कम से कम डेढ़ गुना निर्धारित कर चुकी है। किंतु एक सत्य यह भी है कि इसका लाभ प्रत्येक किसान को नहीं मिल रहा है। इससे लाभान्वित केवल वही किसानों हो रहे है, जिनके पास अपने परिवार की आवश्यकता पूरी करने के बाद अतिरिक्त अनाज मंडी में भेजने लायक बच रहा है और देश में ऐसे किसानों की संख्या बहुत कम है।

यदि किसानों और उनपर आश्रितों को इस संकट से बाहर निकालना है, तो उन्हे अन्य क्षेत्रों के रोजगारों से जोड़ना होगा। इसके लिए उन्हे कौशल विकास का प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करने होंगे। उचित शिक्षा और अन्य सुविधाएं न होने के कारण अधिकांश ग्रामीण न केवल बेरोजगार हो जाते है, बल्कि आज की गला-काट प्रतिस्पर्धा के दौड़ में किसी आधुनिक उद्योग-धंधे के लिए समर्थ भी नहीं रहते। कटु सत्य है कि स्वतंत्रता के सात दशक बाद भी अधिकतर ग्रामीणों क्षेत्रों में आधारभूत संरचना का विकास नहीं हो पाया है। अधिकांश गांव-देहातों में सड़क, बिजली, पानी, प्राथमिक चिकित्सा, संचार आदि का आभाव है। विडंबना देखिए, 70 वर्षों में देश के सैकड़ों गांवों में पहली बार बिजली पहुंची है। आवश्यकता इस बात की भी है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आयुष्मान भारत और सौभाग्य जैसी जनकल्याण योजनाओं का क्रियान्वान भी प्रशासन ईमानदारी से करें।

जबतक ग्रामीण क्षेत्रों सहित देश का समेकित विकास नहीं होगा, किसानों को सस्ती, सुलभ और गुणवत्ता वाली शिक्षा नहीं मिलेगी और कृषि के अतिरिक्त ग्रामीणों के लिए अन्य क्षेत्रों में अवसर पैदा नहीं होंगे- तबतक किसान असंतुष्ट रहेंगे।

अगले प्रधानमंत्री के लिए समस्याओं का पहाड़

इस देश में 19 महीने तक आपातकाल रहा. इंदिरा गांधी पर आपातकाल हटाने का कोई दबाव भी नहीं था. हां, मीडिया पर सेंशरशिप था. संजय गांधी उनके पुत्र थे. उनके पास कोई आधिकारिक पद नहीं था. चर्चा थी कि सब जगह संजय गांधी की चलती है. वे जो बोल देते हैं, वही अंतिम होता है. आज संजय गांधी से दस गुना अधिक पावर का इस्तेमाल अमित शाह कर रहे हैं. अमित शाह एक्स्ट्रा कंस्टीट्यूशनल अथॉरिटी बन गए हैं. हर अफसर से सीधे बात करते हैं. आज तो आपातकाल नहीं है, सेंशरशिप भी नहीं है. फिर भी अखबार सरकार के खिलाफ नहीं लिख पाते. सब का मुंह पैसे से बंद है.

सीबीआई के रूप में सरकार के पास एक सबसे शक्तिशाली यंत्र है। सीबीआई सीधे प्रधानमंत्री कार्यालय को रिपोर्ट करती है। यह एक ऐसा हथियार है, जिसका उपयोग, दुरुपयोग केंद्र में जिसकी भी सरकार होती है, वो अपने विरोधी के लिए करते हैं। जाहिर है, हर आदमी कभी न कभी सत्ता में रहा है, तो आप उसे डराने के लिए कभी भी कोई जांच शुरू करवा सकते हैं। ऐसा पहले भी हुआ है। एचडी देवेगौड़ा के जमाने में लालू यादव के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए तत्कालीन सीबीआई डायरेक्टर जोगिंदर सिंह ने कार्यालय खुलवाया था। सीबीआई का दुरुपयोग ज्यादा हुआ है। मतलब दुरुपयोग की चर्चा ज्यादा हुई

है। सीबीआई 365 दिन काम करती है। आज जो हो रहा है वो अप्रत्याशित है।

यह न कभी हुआ था, न कोई सोच सकता है कि ऐसा हो भी सकता है। सीबीआई निदेशक आलोक वर्मा बहुत अच्छे पुलिस ऑफिसर हैं। गुजरात कैडर के जिस राकेश अस्थाना को मोदी जी ने नंबर दो बनाया, वो उस पोस्ट के लायक नहीं हैं। उनके खिलाफ आरोप भी लगे थे, एफआईआर भी दर्ज हो रही थी, लेकिन वे इसलिए नंबर दो बना दिए गए, क्योंकि मोदी जी के नजदीकी थे। नंबर वन और नंबर टू के बीच में जो समन्वय होना चाहिए, वो पहले दिन से नहीं था। अगर सबसे मजबूत इन्वेस्टिगेटिव एजेंसी की खुद की हालत इतनी खराब है, तो देश क्या करेगा। हमलोग तमाशबीन बन गए हैं।

अंदरखाने की जो चर्चा है, मैं उस पर बोलना भी नहीं चाहता, क्योंकि वह और खतरनाक है। अब मोदी जी के फिर से पीएम बनने के अवसर कमजोर होते जा रहे हैं। जो नया प्रधानमंत्री बनेगा चुनाव के बाद, उसे काफी मेहनत करनी पड़ेगी, चाहे वो नया पीएम कांग्रेस से हो या भाजपा से या किसी और दल से। हां, मोदी जी फिर से पीएम बनें, तो वे इसे ऐसे ही चलाएंगे।

2014 में देश की जो हालत यूपीए छोड़कर गई थी, उससे कहीं बदतर हाल में मोदी छोड़कर जाएंगे देश को। यह एक बात है कि अर्थव्यवस्था गड़बड़ हो गई, इसके कई कारण है, जिन पर आपका वश नहीं है। पेट्रोल के दाम बढ़े हुए हैं और करेंट अकाउंट डेफिसिट ज्यादा है। इसलिए रुपए की वैल्यू कम है। यह एक अलग समस्या है। रिजर्व बैंक गवर्नर, चीफ इकोनोमिक एडवाइजर जैसे अर्थशास्त्री इस समस्या ने निपट सकते हैं। तब शायद कुछ कड़े कदम उठाने की जरूरत पड़ सकती है। असल में कड़े कदम अभी उठाने चाहिए। लेकिन मुझे लगता नहीं कि इस सरकार को अर्थशास्त्र की समझ है।

अरविंद सुब्रमण्यम के जाने के बाद मुख्य आर्थिक सलाहकार तक नहीं रखा सरकार ने। रिजर्व बैंक गवर्नर अपनी धुन में रहते हैं, वित्त मंत्री अर्थशास्त्र में निपुण नहीं हैं। फिर कैसे और कौन देख रहा है वित्त मामलों को? एक हसमुख अधिया साहब हैं, वित्त सचिव। प्रधानमंत्री के चहेते हैं। वो नीरव मोदी मामले में पकड़े गए। नीरव मोदी से उपहार ले लिया उन्होंने। अधिया साहब को कैबिनेट सेक्रेटरी बनाने की बात थी, लेकिन मोदी जी ने सही फैसला लेते हुए उन्हें

कैबिनेट सचिव नहीं बनाया।

दूसरी तरफ, मौजूदा सरकार नौकरशाही के चले आ रहे मानदंड को एक-एक करके तोड़ रही है। एक बार सरकार ने कहा कि ज्वाइंट सेक्रेटरी लेवल के दस अधिकारियों को बाहर से लाएंगे। इनकी मंशा रही होगी कि संघ टाइप लोगों को लाएंगे। लेकिन अब उस विचार को ड्रॉप करना पड़ा। जाहिर है, इस काम के लिए एक सिस्टम बना हुआ है। यह संघ लोक सेवा आयोग का काम है। अगर बाहर से भी अधिकारी लेने हैं, तो उनके चयन का काम संघ लोक सेवा आयोग को करना चाहिए। क्या ऐसे अधिकारियों का नाम अमित शाह तय करेंगे?

इस देश में 19 महीने तक आपातकाल रहा। इंदिरा गांधी पर आपातकाल हटाने का कोई दबाव भी नहीं था। हां, मीडिया पर सेंशरशिप था। संजय गांधी उनके पुत्र थे। उनके पास कोई आधिकारिक पद नहीं था। चर्चा थी कि सब जगह संजय गांधी की चलती है। वे जो बोल देते हैं, वही अंतिम होता है। आज संजय गांधी से दस गुना अधिक पावर का इस्तेमाल अमित शाह कर रहे हैं। अमित शाह एक्स्ट्रा कंस्टीट्-यूशनल अथॉरिटी बन गए हैं। हर अफसर से सीधे बात करते हैं।

आज तो आपातकाल नहीं है, सेंशरशिप भी नहीं है। फिर भी अखबार सरकार के खिलाफ नहीं लिख पाते। सब का मुंह पैसे से बंद है। अखबार मालिक पैसे के लालची हैं। पैसा लेकर और डर कर नहीं लिख पाते। अमित शाह जो नंगा नाच कर रहे हैं, उससे प्रशासनिक सेवा में बहुत रोष है। लेकिन बोल कोई नहीं पा रहा है, क्योंकि सबको नौकरी करनी है। लेकिन चुनावी प्रक्रिया शुरू होते ही यह गुस्सा फट पड़ेगा।

आलोक वर्मा पहले दिल्ली के पुलिस कमिश्नर बनाए गए थे। इनसे पहले बी एस बस्सी थे। बस्सी, अरविंद केजरीवाल से बदतमीजी कर रहे थे। अमित शाह और अरुण जेटली की शह पर वे ऐसा कर रहे थे। जब उनकी जगह आलोक वर्मा आए तब से दिल्ली पुलिस और आम आदमी पार्टी की सरकार के बीच खटपट बंद हो गई। वर्मा एक निपुण ऑफिसर हैं। फिर वे सीबीआई निदेशक बनाए गए। लेकिन अस्थाना को उनके पीछे लगा दिया गया।

चर्चा तो यह भी थी कि सरकार गोगोई को मुख्य न्यायाधीश नहीं बनाएगी, लेकिन मोदी जी को सद्बुद्धि आई। नहीं तो एक और मुश्किल होती। देश का नुकसान करना आसान है और नुकसान करने के लिए कोई बड़ी कैबिनेट मिटिंग बुलाने की जरूरत नहीं होती है। आपके एक छोटे से गलत निर्णय से देश का नुकसान हो जाता है।

प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व सही होना चाहिए। जवाहरलाल नेहरू की तो बात ही अलग थी। इंदिरा गांधी ने भी इमरजेंसी वाली गलती के अलावा सब ठीक ही किया। बांग्लादेश युद्ध में जीत, गरीबी हटाओ जैसे नारे आदि के बाद वे चुनाव भी जीतीं। राजीव गांधी के पास अनुभव नहीं था। पांच साल में कुछ कर नहीं पाए। लेकिन उनके इरादे अच्छे थे, आधुनिक आदमी थे, आधुनिक काम चाहते थे, हो नहीं पाया।

सरकार की साख ढाई साल में इतनी गिर गई कि 1989 के चुनाव में 400 सीट से काफी नीचे आ गए। फिर वीपी सिंह आए, चंद्रशेखर जी आए। नरसिम्हा राव जब आए, तब तक खजाना खाली हो गया था। उनके पास डिवैल्यूशन करके लिबरलाइजेशन करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। हमारे उद्योगपति भी चाहते थे कि कंट्रोल राज खत्म कर दो। खोल दिया तो आज देश में चीन के इतने सामान आ रहे हैं कि आप उससे कंपीट कर ही नहीं सकते।

इतने बड़े देश की अर्थव्यवस्था बहुत नाजुक चीज होती है। सोच-समझ कर काम करना चाहिए। उसके लिए बुद्धिमान लोगों की जरूरत है। मौजूदा सरकार में तो सब बुद्धिहीन

बैठे हुए हैं। जो बुद्धिमान हैं, उन्हें किनारे लगा दिया गया है। कुल मिलाकर आर्थिक स्थिति गंभीर है। चार साल में शासन, प्रशासन, स्टेट का नैतिक स्तर गिर गया। कोई भी नया प्रधानमंत्री आया, तो उसे देश संभालने में बहुत मुश्किल आएगी, मोदी आए तो ऐसे ही चलता रहेगा।

मुरली मनोहर जोशी, आडवाणी जी को बुद्धि लगानी चाहिए कि अगर आगे भी भाजपा की सरकार आई तो जो गलती हुई है, उसे कैसे सुधारना है। कैसे स्थिति को पटरी पर वापस लाना है। पटरी पर भी आकर हम कोई अमेरिका नहीं बन जाएंगे, जैसा ख्वाब ये रोज दिखाते हैं। हम सौ करोड़ लोग हैं। गरीबी, भुखमरी है।

दवा-दारू का पैसा नहीं है लोगों के पास, अस्पताल नहीं है यहां। खाद्य सुरक्षा नहीं है। किसान मेहनत करके खाद्यान्न उगाते हैं। सरकार का इसमें क्या रोल होना चाहिए? सरकार तो किसानों को मारने में लगी हुई है। सरकार इन्हें उचित मूल्य नहीं दे रही है।

मूल समस्याओं पर ध्यान देने की जगह सरकार मूर्ति बनाएगी, रिबन काटेगी, एक ही फ्लाईओवर का तीन बार उद्घाटन करेगी। पुरानी योजनाओं का नाम बदलेगी। भाजपा की पुरानी बीमारी है कि मुसलमान अच्छे नहीं लगते। ये मुगल को भी मुसलमान गिनते हैं। अरे मुगल तो राजा थे। राजा को हिन्दू-मुसलमान से क्या मतलब। मुगलसराय का नाम बदल दिया।

ये बहुत छोटे स्तर पर काम करने वाले लोग हैं। साढ़े चार साल में एक चीज मोदी जी ने पक्का प्रमाणित कर दिया है कि ये लोग केंद्र सरकार चलाने के काबिल नहीं हैं। इससे ज्यादा बुद्धि की बलिहारी क्या होगी कि इस देश को अमित शाह चला रहे हैं।

मोदी चलाएं तो एक बात है, लेकिन अमित शाह चला रहे हैं। मतलब मामला खत्म है। मुझे समझ नहीं आया कि आरएसएस क्यों नहीं बीच में बोल रहा है। आडवाणी जी और मुरली मनोहर जोशी जी को तो मूकदर्शक बना दिया है इन्होंने। सरकार ने प्रशासनिक ढांचा इतना बिगाड़ दिया है कि उसकी कीमत तो अदा करनी ही पड़ेगी। लेकिन जो अगला प्रधानमंत्री आएगा, उसके लिए बड़ा संकट है।

प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व सही होना चाहिए। जवाहरलाल नेहरू की तो बात ही अलग थी। इंदिरा गांधी ने भी इमरजेंसी वाली गलती के अलावा सब ठीक ही किया। बांग्लादेश युद्ध में जीत, गरीबी हटाओ जैसे नारे आदि के बाद वे चुनाव भी जीतीं। राजीव गांधी के पास अनुभव नहीं था। पांच साल में कुछ कर नहीं पाए। लेकिन उनके इरादे अच्छे थे, आधुनिक आदमी थे, आधुनिक काम चाहते थे, हो नहीं पाया।

तो क्या राहुल गांधी का जनेऊ और गोत्र जनता ने कबूल कर लिया है !

11 दिसंबर, 2018 का दिन भारतीय राजनीति में में लंबे वक्त तक याद किया जाएगा।यह दिन भारत विजय के अभियान में लगी बीजेपी और उसकी लीडरशिप के लिए तो एक झटका देने वाला तो साबित हुआ ही है लेकिन इससे ज्यादा महत्व इस बात है कि इस दिन आए पांच राज्यों के चुनावी नतीजों ने भारतीय राजनीति की सबसे पुरानी पार्टी यानी कांग्रेस की सोच में एक बड़े बदलाव का बुनियाद रख दी है।

पांच राज्यों का यह चुनाव केंन्द्र की नरेंद्र मोदी सरकार से भी ज्यादा कांग्रेस के अध्यक्ष राहुल गांधी और उनकी पार्टी के लिए अहम था क्योकि इस चुनाव से ही तय होना होना कि पिछले एक साल में राहुल गांधी जिस तरह से खुद को जनेऊधारी ब्राह्मण के तौर पर पेश करते हुए सॉफ्ट हिंदुत्व के रास्ते पर चल रहे थे, उसके अंत में उन्हें कोई मंजिल मिलेगी भी या नहीं।

चुनावी नतीजों ने यह संकेत दिया है कि राहुल गांधी का जनेऊ और उनका दत्तात्रेय गोत्र भारत जनता ने कबूल कर लिया है। यही वजह है जो कांग्रेस के इतिहास में इस दिन को बेहद खास बनाती है क्योंकि अब इस 19वीं सदी की पार्टी की रणनीति में वैसा बदलाव देखने को मिल सकता है जिसकी अपेक्षा कुछ सालों पहले तक कतई नहीं की जा सकती थी।

'पप्पू' की छवि के साथ साल भर पहले कांग्रेस अध्यक्ष बने राहुल गांधी के सामने अपने खानदान या यूं कहें कि गांधी सरनेम पर कायम पार्टी के भरोसे को बरकरार रखने के लिए भारी दबाव था। इसी दबाव के मद्देनजर राहुल ठीक उसी रास्ते पर चलना शुरू किया जिसपर चलकर मोदी प्रधानमंत्री की कुर्सी पर पहुंचे हैं। फर्क बस इतना था कि मोदी के कठोर हिंदुत्व की जगह राहुल ने नरम हिंदुत्व का सहारा लिया।

बीते साल गुजरात चुनाव के दौरान मंदिर-मंदिर जाने के साथ ही राहुल ने हिदुत्व के जिस अभियान का आगाज किया वह राजस्थान के चुनाव में उनके गोत्र के 'खुलासे' तक पहुंच गया। दरअसल राहुल गांधी को हिंदुत्व के रास्ते तक पहुंचाने की पटकथा चार साल पहले पूर्व केन्द्रीय मंत्री एके एंटनी की उस रिपोर्ट में ही लिख दी गई थी जिसमें 2014 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की भारी पराजय की वजह उसकी हिंदुत्व विरोधी छवि को करार दिया गया।

अपने पूरी चुनावी इतिहास में कांग्रेस को साल 2014 की जैसी हार कभी नहीं मिली थी। पार्टी लोकसभा में विपक्ष का नेता खड़ा करने लायक सीटें भी नहीं जुटा सकी। पार्टी ने हार की समीक्षा का

जिम्मा एक एंटनी को सौंपा जिनकी रिपोर्ट में साफ साफ कहा गया कि देश में 10 साल के यूपीए शासन के बाद काग्रेस की छवि हिंदू विरोधी पार्टी की बन गई हैं। करीब 80 फीसदी हिंदू आबादी वाले देश में इस छवि के साथ कोई चुनाव नहीं जीता जा सकता। जाहिर 2014 के बाद हुए तमाम सूबों में भी कांग्रेस एक के बाद एक चुनाव हारती चली गई।

कांग्रेस की इस छवि का फायदा उसके विरोधियों ने जमकर उठाया। एक सुनियोजित तरीके से राहुल गांधी के व्यक्तित्व के साथ साथ उनकी जाति-धर्म पर भी सवाल उठाए गए। सोमनाथ मंदिर के दर्शन के दौरान तो उनके हिंदू होने पर सवाल खड़ा किया गया। ऐसे आरोपों जवाब में राहुल गांधी के पास अपना गोत्र बताने या जनेऊ दिखाने के अलावा को चारा ही नहीं बचा था।

पांच राज्यों के चुनाव से पहले कैलाश मानसरोवर यात्रा, मध्यप्रदेश के घोषणा पत्र में गाय की मौजूदगी और राजस्थान के पुष्कर से राहुल के 'दत्तात्रेय' गोत्र का खुलासा। ये कुछ ऐसे दांव थे जो इन चुनावों में राहुल गांधी के लिए एकदम सटीक पड़े हैं। सालों से चली आ रही एंटी इनकंबेंसी ने राहुल के दांवों को सहीं साबित कर दिया और लगता नहीं कि इस कामयाबी के बाद राहुल सॉफ्ट हिंदुत्व के इस रास्ते को छोड़ने वाले हैं।

बीते साल गुजरात चुनाव के दौरान मंदिर-मंदिर जाने के साथ ही राहुल ने हिंदुत्व के जिस अभियान का आगाज किया वह राजस्थान के चुनाव में उनके गोत्र के 'खुलासे' तक पहुंच गया। दरअसल राहुल गांधी को हिंदुत्व के रास्ते तक पहुंचाने की पटकथा चार साल पहले पूर्व केन्द्रीय मंत्री एके एंटनी की उस रिपोर्ट में ही लिख दी गई थी जिसमें 2014 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की भारी पराजय की वजह उसकी हिंदुत्व विरोधी छवि को करार दिया गया।

कांग्रेस ने राजस्थान, एमपी और छत्तीसगढ़ ने जीत जरूर हासिल की है लेकिन मोदी अभी हारे नहीं हैं। एमपी में बीजेपी को कांग्रेस से ज्यादा वोट मिले हैं, राजस्थान में भी कांग्रेस बस एक सीट का ही बहुमत हासिल कर सकी है। यानी बीजेपी के हिंदुत्व की स्वीकार्यता अब भी बरकरार है लिहाजा राहुल के सामने अब इस सॉफ्ट हिंदुत्व पर चलने के अलावा कोई और रास्ता दिखाई नहीं दे रहा है।

2019 के लोकसभा चुनाव के लिए राहुल के सामने सबसे बड़ी चुनौती यूपी में होगी। सपा-बसपा के साथ मोदी विरोधी महागठबंधन अगर आकार लेता है तो कांग्रेस उसमें सम्मानजनक सीटें हासिल करना चाहेगी।

जाहिर इसके लिए कांग्रेस के पास अपना को बेस वोटबैंक होना भी जरूरी है। यूपी में अपने बेस वोटबैंक को तैयार करने के लिए कांग्रेस के निगाहें ब्राह्मण मतदाताओं पर है जिनकी संख्या यूपी में अच्छी खासी है। इसके अलावा यह समुदाय बाकी वोटों को भी प्रभावित करने का माद्दा रखता है। पांच पांच राज्यों का चुनाव तो एक ट्रेलर था जो हिट रहा। अब पूरी फिल्म तो 2019 से पहले दिखाई देगी जहां यूपी को दिमाग में रखते हुए राहुल और भी बड़े ब्राह्मण तौर पर नजर आ सकते हैं।

कांग्रेस के मुखिया बनने के एक साल बाद राहुल गांधी का उदय

राहुल गांधी को पिछले साल दिसंबर में पार्टी की कमान मिली थी। पार्टी के सर्वेसर्वा बनने के बाद गुजरात के नतीजे कांग्रेस के लिए निराशाजनक रहे थे। साल बीतने के साथ ही राहुल गांधी के राजनीतिक सूझबूझ पर सवाल खड़ा किया जाता रहा है। बीजेपी के नेता उनको तरह-तरह के नाम से पुकारते रहे हैं। कभी हिंदू होने पर सवाल खड़ा किया जाता है। कभी गोत्र पूछा जाता है। इन सबसे बाखबर रहते हुए भी राहुल अपने काम से जवाब देते रहे हैं।

बीजेपी राहुल गांधी का मजाक बनाती रही, लेकिन राहुल गाधी गंभीरता से लगे रहे। इसका अच्छा नतीजा मिला है। कांग्रेस ने तीन राज्यों में अच्छा प्रदर्शन किया है। कांग्रेस के नेता सचिन पायलट ने कहा कि ये जनता की तरफ से राहुल गांधी को तोहफा है। इस चुनाव से राहुल गांधी ने पार्टी के भीतर और बाहर अपने आलोचकों का जवाब दिया है।

राहुल गांधी का उदय: कांग्रेस के लिए तीन राज्यों के नतीजे राहत की खबर है। कई साल के सूखे के बाद जिस तरह बारिश का आनंद मिलता है, ये नतीजे कांग्रेस के लिए ठीक वैसे ही हैं। 2014 के बाद पंजाब और कर्नाटक के अपवाद के अलावा कांग्रेस हर चुनाव में हार रही थी। इस हिसाब से ये नतीजे कांग्रेस के आत्मविश्वास को बढ़ाएंगे। अगर ये चुनाव 2019 का सेमीफाइनल मान लिया जाए तो राहुल गांधी निश्चित मैन ऑफ द मैच है। जिस तरह से पार्टी के भीतर राहुल गांधी ने कई प्रयोग किए हैं। उससे कांग्रेस को फायदा हुआ है।

तीनों राज्य में राहुल गांधी ने अकेले प्रचार अभियान को संभाला और हर मसले पर बारीकी से नजर रखा है। संगठन में व्यापक फेरबदल किया है। मध्य प्रदेश से लेकर राजस्थान और छत्तीसगढ़ में संगठन में काफी प्रवर्तन किया है। राजस्थान में सचिवों के खिलाफ शिकायत मिलते ही त्वरित कार्यवाई की और उनको हटाया है।

इस चुनाव में तीनों मुख्यमंत्रियों को मजबूत चुनौती दी गई है। झालरापाटन में वंसुधरा के खिलाफ मानवेन्द्र सिंह, बुधनी में शिवराज सिंह के खिलाफ अरूण यादव तो रमन सिंह के खिलाफ करूणा शुक्ला को मैदान में उतारा गया था, ताकि इन नेताओं को वॉक ओवर ना मिल जाए। जाहिर है कि अगर चुनाव लोकतंत्र में पैमाना है तो, पहली बार राहुल गांधी प्रधानमंत्री के मुकाबले सफल साबित हुए हैं।

राहुल के प्रयोग: 2014 में हार के बाद राहुल गांधी ने कई प्रयोग किए हैं। जिसको लेकर उनकी आलोचना भी होती रही है। सॉफ्ट हिंदुत्व का फामूर्ला कारगर साबित हो रहा है। गुजरात चुनाव में राहुल गांधी ने मंदिरों की परिक्रमा शुरू की थी। जो बदस्तूर जारी है।

कर्नाटक चुनाव के बाद राहुल गांधी ने कैलाश मानसरोवर की यात्रा की थी। ये एक राजनीतिक मास्टर स्ट्रोक माना गया। बीजेपी के पास इसका कोई जवाब नहीं था। लेकिन बीजेपी के नेता राहुल गांधी के सॉफ्ट हिंदू होने का मजाक उड़ाते रहे हैं। राजस्थान चुनाव से पहले राहुल गांधी का गोत्र पूछा गया और पुष्कर में राहुल गांधी ने अपना गोत्र सार्वजनिक कर दिया। बीजेपी ने शोर भी मचाया लेकिन उसका असर नहीं हुआ है।

हिंदुत्व बनाम गुड हिंदू: बीजेपी के हिंदुत्व के जवाब में राहुल गांधी ने अच्छे हिंदू का नैरेटिव इस चुनाव में रखा है। प्रधानमंत्री से उनसे सीखने की नसीहत दी, जिसका जवाब सुषमा स्वराज ने दिया है। राहुल गांधी की इस चुनौती के जवाब में सुषमा ने कहा कि राहुल से हिंदू होने का पाठ सीखने की जरूरत नहीं है। लेकिन शायद अच्छे हिंदू की बात जनता में हिट हो गयी है। जिससे पब्लिक ने कांग्रेस का समर्थन किया है। राहुल गांधी ने बीजेपी के हिंदुत्व का जवाब सॉफ्ट हिंदू से दिया है।

प्रधानमंत्री के खिलाफ डटे रहे: पूरी कांग्रेस पार्टी जब प्रधानमंत्री के खिलाफ बोलने से कतरा रही थी, तब भी राहुल गांधी ने लगातार पीएम के खिलाफ मोचाबंदी जारी रखा। नोटबंदी से लेकर राफेल तक, राहुल गांधी का अभियान बदस्तूर जारी है। राहुल ने पार्टी के सलाह को दरकिनार करते हुए पीएम के खिलाफ हर मुद्दे पर खड़े रहे हैं। शुरूआत में सभी ने इसे अहमकाना काम बताया, लेकिन धीरे धीरे राहुल गांधी की बात ट्रेंड करने लगी।

2014 के बाद से ही पीएम के खिलाफ बोलना मुसीबत मोल लेना था। लेकिन राहुल गांधी ने कोई कोताही नहीं बरती। जिसका फायदा कांग्रेस को अब मिल रहा है।

विरासत में पार्टी मिली सत्ता नहीं: राहुल गांधी को पिछले साल दिसंबर में पार्टी की कमान मिली थी। ये कहा जा सकता है कि सोनिया गांधी ने पार्टी की विरासत राहुल को सौंप दी है। लेकिन राहुल गांधी को विरासत में सत्ता नहीं मिली है। 2014 से लगातार कांग्रेस चुनाव में पराजित हो रही थी।

बीजेपी का ग्राफ बढ़ रहा था। ऐसे में कांग्रेस की कमान राहुल गांधी को मिली है। अभी भी केन्द्र की सत्ता के लिए आगे भी संघर्ष करना है। ये इत्तेफाक ही कहा जाएगा कि 2004 में जब राहुल गांधी ने राजनीति की शुरूआत की थी, तब भी कांग्रेस सत्ता से बाहर थी। राहुल गांधी ने पहली बार अमेठी से 2004 में चुनाव लड़ा था।

हिंदी हार्टलैंड में कांग्रेस की दस्तक: बीजेपी ने हिंदी बेल्ट में कांग्रेस का सफाया कर दिया था। राजस्थान में पांच साल और मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ में कांग्रेस का 15 साल से चल रहा वनवास राहुल गांधी की अगुवाई में खत्म हो रहा है। जो कांग्रेस के भविष्य के लिए अच्छे संकेत हैं।

राहुल गांधी ने साबित किया है कि विपरीत परिस्थिति में काम कर सकते हैं। ये चुनाव नतीजे जाहिर कर रहे हैं कि राहुल गांधी की स्वीकार्यता बढ़ रही है। हिंदी हार्टलैंड ही बीजेपी का गढ़ बना था। उसमें सेंध लगाने में कांग्रेस पार्टी कामयाब रही है। हालांकि कांग्रेस की असली चुनौती यूपी में है।

2018 से 2019 तक चुनौती

राहुल गांधी सत्ता के फाइनल में प्रवेश कर गए हैं। जिस टीम से फाइनल मुकाबला है, उसको हराना आसान नहीं है। सिर्फ तीन राज्यों से भविष्य सुनहरा है, ये अंदाजा लगाकर खुश होना सही नहीं होगा। आगे चुनौती काफी है। पहली बात बीजेपी ने कांटे की टक्कर दी है। दूसरे विधानसभा चुनाव के मुद्दे आम चुनाव से अलग होते हैं।

राहुल बनाम मोदी की लड़ाई में राह आसान नहीं है। बीजेपी आम चुनाव को प्रधानमंत्री बनाम राहुल गांधी करने की कोशिश करेगी, जिसकी काट अभी से तलाश करनी पड़ेगी। संसदीय चुनाव चेहरे पर नहीं, मुद्दे पर लड़े जाने चाहिए। लेकिन ये नैरेटिव कांग्रेस को अभी से बनाने की कोशिश करनी चाहिए।

गठबंधन ही विकल्प

हालांकि ये जीत कांग्रेस का जोश बढ़ाने के लिए जरूरी थी। लेकिन मोदी को मात देने के लिए गठबंधन ही विकल्प है। मध्यप्रदेश में गठबंधन ना हो पाने का असर दिखाई दिया है। राहुल गांधी इस जीत के बाद भी बतौर नेता विपक्ष के सभी नेताओं की पहली पंसद नहीं बन सकते हैं। हालांकि उनकी स्वीकार्यता जरूर बढ़ी है। लेकिन घटक दल के लिए सोनिया गांधी का ही चेहरा आगे करना पड़ेगा। संसद सत्र से पहले बुलाई गई ऐसी बैठक में सोनिया गांधी का रहना इसका सबूत है। नतीजों के दौरान सोनिया गांधी ने मायावती से बातचीत की है। ये जाहिर करता है कि राहुल गांधी को अपनी राह हमवार करने के लिए सोनिया गांधी के मदद की जरूरत है।

2003 से सबक

2003 में इन तीन राज्यों के चुनाव में जीत के बाद उत्साहित बीजेपी ने आम चुनाव पहले करा दिया। नतीजा सबको मालूम है। स्व।अटल बिहारी वाजपेयी को हार का मुंह देखना पड़ा था। इस बात का सबब ये है कि इन तीन राज्यों में अच्छा करने के बाद भी आम चुनाव में हार सकते हैं। इसलिए गफलत में नहीं रहना चाहिए।

3 राज्यों में कांग्रेस को मिली जीत का महागठबंधन पर क्या होगा असर?

अब जबकि कांग्रेस मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान में सरकार बनाने जा रही है तो इस हालत में मजबूत हुई कांग्रेस एसपी-बीएसपी को शायद ही पसंद आएगी

राजस्थान, छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश में जीत के बाद कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर निशाना साधा। राहुल गांधी ने 2019 में जीत का दावा करते हुए कहा कि आने वाले लोकसभा चुनाव में बीजेपी को हराएंगे। राहुल ने कहा, 'बीजेपी की एक विचारधारा है, हम उस विचारधारा से लड़ेंगे और उन्हें हराएंगे, हमने उन्हें आज भी हराया है और उन्हें 2019 में भी हराएंगे।'

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी विधानसभा चुनाव में मिली जीत से उत्साहित हैं। यह उत्साह और भी ज्यादा दिख रहा है, क्योंकि राहुल गांधी की अध्यक्षता में पहली बार कांग्रेस ने बीजेपी को आमने-सामने की लड़ाई में मात दी है। कांग्रेस को अब लगने लगा है कि बीजेपी को 2019 के लोकसभा चुनाव में भी हराया जा सकता है।

कांग्रेस पहले से भी मोदी विरोधी मोर्चा बनाकर कई दलों के साथ बीजेपी को मात देने की तैयारी कर रही है। महागठबंधन के नाम पर देश भर के विरोधी दलों को साथ लाने की कांग्रेस की कोशिशों पर विधानसभा चुनाव के परिणाम का असर पड़ेगा।

कांग्रेस अब पहले से और मजबूत होकर इस

पूरे महागठबंधन का नेतृत्व करने की कोशिश करेगी। कांग्रेस का कद विपक्षी मोर्चे में और बढ़ेगा, क्योंकि अबतक ममता बनर्जी और चंद्रबाबू नायडू जैसे क्षेत्रीय क्षत्रप ही महागठबंधन में मजबूत दिख रहे थे। लेकिन, अब महागठबंधन में और अधिक आत्मविश्वास के साथ कांग्रेस अपनी बात रखने की हालत में होगी। दूसरे शब्दों में कहें तो महागठबंधन के भीतर अब कांग्रेस की विश्वसनीयता ज्यादा बढ़ेगी।

लेकिन, कांग्रेस की जीत के बाद महागठबंधन के भीतर का समीकरण बिगड़ भी सकता है। इसकी एक झलक मतगणना के ठीक एक दिन पहले लोकसभा चुनाव 2019 की रणनीति बनाने के लिए महागठबंधन की बैठक में भी दिख गई थी। 21 दलों के नेता इस बैठक में तो आए थे, लेकिन, एसपी और बीएसपी के नेता इस बैठक से नदारद रहे। अखिलेश यादव और मायावती का महागठबंधन की बैठक का 'बहिष्कार' करना साफ दिखा रहा है कि ये दोनों नेता कांग्रेस का हाथ पकड़ने के लिए इतनी आसानी से तैयार नहीं हो रहे हैं।

अब जबकि कांग्रेस मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान में सरकार बनाने जा रही है तो इस हालत में मजबूत हुई कांग्रेस एसपी-बीएसपी को शायद ही पसंद आएगी। ऐसे में एसपी और बीएसपी कांग्रेस के साथ जाने के बजाए 2019 के चुनावों के बाद ही गठबंधन के विकल्प को खुले रहने की बात करती दिखेंगी। अखिलेश और मायावती यूपी में आरएलडी के साथ मिलकर चुनाव मैदान में उतर सकते हैं।

कांग्रेस अभी भी यूपी में बड़े गठबंधन का हिस्सा बनने की कोशिश में लगी हुई है।कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी के बयान से यह साफ हो जाता है। राहुल गांधी ने कहा, 'कांग्रेस, एसपी, बीएसपी की विचारधारा एक है, जो कि बीजेपी से अलग है।' राहुल गांधी के इस बयान का सिला मध्यप्रदेश में एसपी-बीएसपी की तरफ से दिया जा रहा है। जहां एसपी के 1 और बीएसपी के 2 विधायक 'विचारधारा' के नाम पर कांग्रस को समर्थन दे रहे हैं। बीजेपी को रोकने के लिए बीएसपी सुप्रीमो मायावती ने कांग्रेस की सरकार को समर्थन देने का ऐलान कर दिया है। लेकिन, इसे यूपी में महागठबंधन में कांग्रेस के साथ आने के बारे में कहना जल्दबाजी होगी, क्योंकि मायावती के तेवर कांग्रेस को लेकर भी तल्ख दिख रहे हैं।

इस बीच हिंदी पट्टी की जीत में दक्षिण भारत के राज्य तेलंगाना में मिली कांग्रेस की हार को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। तेलंगाना में के चंद्रशेखर राव एक बार फिर मुख्यमंत्री बनने जा रहे हैं। के।सी ।आर की जीत ने तेलंगाना में कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी और टीडीपी अध्यक्ष चंद्रबाबू नायडू की जुगलबंदी को खारिज कर दिया है।

महागठबंधन के लिहाज से यह हार इसलिए भी चिंता का कारण है क्योंकि महागठबंधन में सबको जोड़ने की कोशिश में आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू ही सबसे ज्यादा सक्रिय हैं। लेकिन, तेलंगाना में उनकी तरफ से बनाया गया महागठबंधन (प्रजा कुटमी) के।सी।आर को मात देने में विफल हो गया। अब सबसे बड़ा सवाल यही है कि कांग्रेस और टीडीपी एक-दूसरे के साथ आंध्र प्रदेश में जाएंगे? क्योंकि लोकसभा चुनाव के साथ विधानसभा चुनाव भी आंध्र प्रदेश में होगा।

दरअसल, आंध्र प्रदेश में कांग्रेस की छवि एक ऐसी पार्टी की रही है जिसने राज्य का विभाजन किया और विभाजन ठीक तरीके से नहीं हुआ। ऐसे में टीडीपी प्रमुख चंद्रबाबू नायडू और कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी की जुगलबंदी कब तक साथ रहेगी, इस पर अभी से ही संशय के बादल मंडराने लगे हैं, क्योंकि अभी लोकसभा और राज्य विधानसभा चुनाव में तीन से चार महीने का वक्त बचा है।

दूसरी तरफ, अखिलेश यादव और मायावती की तरह के चंद्रशेखर राव भी चुनाव बाद किसी गठबंधन में जाने को लेकर विकल्प खुला रखना चाहते हैं। चुनाव से पहले अब राव का किसी भी गठबंधन के साथ जाना मुश्किल है, क्योंकि अब राज्य में बड़ी जीत दर्ज करने के बाद वो लोकसभा चुनाव और उसके बाद जरूरत पड़ने पर सरकार बनाने में खुलकर खेल सकते हैं।

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी 2019 में बीजेपी को हराने के लिए फिर से कमर कस रहे हैं, लेकिन, अखिलेश, मायावती और के।सी।आर जैसे बड़े खिलाड़ी अपने तुरुप के पत्ते 2019 चुनाव के बाद के लिए बचाकर रखना चाहते हैं, जो राहुल गांधी के पक्ष में नहीं दिख रहा है।

पनीर मखनी रेसिप

पनीर मखनी एक लोकप्रिय नॉर्थ इंडियन रेसिपी है। ये रेसिपी काफी क्रिमी और स्वादिष्ट पनीर रेसिपी है। इस लजीज डिश को आप किसी भी खास मौके या त्योहारों पर बनाकर उसे और खास बना सकते हैं। इस रेसिपी को अपनी फैमिली और दोस्तों के साथ शेयर करना न भूलें।

पनीर मखनी रेसिपी बनाने की विधि

स्टेप-1: इस स्वीट और टैंगी पनीर डिश को बनाने के लिए सबसे पहले पनीर टिक्का बनाएं। इस रेसिपी को घर पर बनाने के लिए सबसे पहले 100 ग्राम मैश्ड पनीर लें। अब फिलिंग के लिए बारीक कटे अदरक, नमक, फ्रेश अनारदाना, बारीक कटी हरी मिर्च और कटा हरा धनिया को आपस में अच्छी तरह से मिला लें। अब पनीर को हार्ट के आकार में काटें और इस मिश्रण से स्टफिंग करें।

स्टेप-2: अब मैरिनेशन के लिए ग्रेटेड कॉटेज चीज, फ्रेश क्रीम,नमक,एक चुटकी गरम मसाला पाउडर और बचा कटा हरा धनिया को आपस में मिक्स करें। अब स्टफ्ड पनीर को मैरिनेशन से कोट करें और 30 मिनट के लिए रेफ्रिजरेटर में रख दें।

स्टेप-3: जब 30 मिनट में ये सेट हो जाए तब हल्की मध्यम आंच पर नॉन स्टिक पैन रखें और बटर फिल्म से कोटिंग करें और पैन में पनीर डालें।लाइट ब्राउन होने तक हल्का फ्राई करें। जब पनीर बन जाए, इसे एक बोल में अलग रख लें।

स्टेप-4: अब एक थिक पैन में बाकि बटर और तेल को गर्म कर लें।जब ये गर्म हो जाए इसमें मेल्टेड बटर और टमेटो प्यूरी डालें। इस प्यूरी को हल्की आंच पर तलें और फिर आंच तेज कर लें। मिश्रण के बॉइल होने तक प्यूरी को चलाते रहें और फिर ढक कर हल्की आंच पर पकाएं जबतक कि तड़तड़ाने की आवाज न आने लगे।

स्टेप-5: जब प्यूरी थिक ग्रेवी में बदल जाए तब इसमें पनीर टिक्का और नमक डालें। पनीर को ग्रेवी में अच्छी तरह से और सावधानी से मिक्स करें ताकि पनीर न टूटे और अच्छी तरह से बराबर कोटिंग हो जाए।

स्टेप-6: अब इस डिश में फ्रेश क्रीम डालें और उसे हर तरफ घुमा लें ताकि ये अच्छी तरह से ब्लेंड और गर्म हो जाए। आखिर में हरी मिर्च से सजाकर गर्मागर्म सर्व करें।

पनीर मखनी रेसिपी की सामग्री

- 500 ग्राम पनीर
- 2 टेबलस्पून बटर
- 1 टीस्पून काला जीरा
- 3/4 कप फ्रेश क्रीम
- 3 आधी हरी मिर्च
- 1 चुटकी चाट मसाला
- 1 टीस्पून रिफाइंड तेल
- 1 कप टमेटो प्यूरी
- 2 चुटकी नमक

मैरिनेशन के लिए

- 60 ग्राम ग्रेटेड चीज क्यूब्स
- 50 मिली फ्रेश क्रीम
- 20 ग्राम कटा हरा धनिया
- 5 ग्राम गरम मसाला पाउडर

फिलिंग के लिए

- 1 1/2 कप अनारदाना
- 1 बारीक कटा हरा मिर्च
- 5 ग्राम बारीक कटा अदरक

वीकेंड रेसिपी: अपने घर बनाएं टेस्टी कढ़ाई चिकन

कढ़ाई चिकन एक ऐसी डिश है दो चिकन लवर को जरूर पसंद आती है। इसे आप आसानी से घर में बना सकते हैं। आइए जानते हैं कैसे बनाते है कढ़ाई चिकन

सामग्री

चिकन (12 टुकड़ों में कटा)– 750 ग्राम
तेल– 3 चम्मच
प्याज– 3
साबुत धनिया– 2 चम्मच
साबुत जीरा– 2 चम्मच
साबुत काली मिर्च– 12
सूखी लाल मिर्च– 5
टमाटर– 3
अदरक–लहसुन पेस्ट– 2 चम्मच
हरी मिर्च– 2
नमक– स्वादानुसार
काजू पेस्ट– 2 चम्मच

विधि: एक नॉनस्टिक पैन को गर्म करें और उसमें धनिया, जीरा और काली मिर्च डालकर 1 मिनट तक सूखा भूनें। लाल मिर्च डालें और खुशबू आने तक भूनें। जब मसाला ठंडा हो जाए तो पाउडर तैयार कर लें। टमाटर को काटें और प्यूरी तैयार कर लें। नॉनस्टिक कड़ाही में तेल गर्म करें। प्याज को काटें और हल्का भूनें। जब प्याज सुनहरा हो जाए तो उसमें अदरक–लहसुन पेस्ट और दो चम्मच पानी डालकर कुछ देर भूनें। हरी मिर्च काटकर डालें।

दो मिनट भूनें और उसके बाद सूखे मसाले डालकर अच्छी तरह से मिलाएं। अब कड़ाही में चिकन डालें और अच्छी तरह से मिलाएं। टमाटर प्यूरी डालें और मिलाएं। अंत में नमक, काजू पेस्ट और आधा कप पानी डालकर अच्छी तरह से मिलाएं। पैन को ढंकें और पकाएं। जब ग्रेवी में एक उबाल आ जाए तो आंच धीमी करें और चिकन के पकने तक पकाएं। गैस ऑफ करें। पांच मिनट तक वैसे ही रहने दें और गर्मागर्म सर्व करें।

फिल्मी सितारों की सुंदरता को भुनाते राजनीतिक दल

जनता फिल्मी सितारों के अभिनय को देख कर अपना मनोरंजन कर सकती है लेकिन अगर वह उन की खूबसूरती देख कर मनोरंजन के नाम पर अपना भविष्य उन्हें सौंपती है तो यह हद दर्जे की बेवकूफी ही है.

इंद्र को जब भी अपना सिंहासन डोलता दिखाई देता था या विरोधी से खतरे का एहसास होता था तो वह सुंदर सुंदर अप्सराओं का खूब इस्तेमाल करते थे. यह पौराणिक नीति आज भी हमारे राजनीतिक दलों के लिए एकदम कारगर साबित हो रही है. 70 के दशक के बाद से राजनीति में कई खूबसूरत अभिनेत्रियों का उदय हुआ. उन्हें संसद में भेजने का सिलसिला शुरू हो गया। पुराणों से सब से अधिक सीख लेती दिखाई देने वाली भाजपा ने कई अभिनेत्रियों को चुनाव मैदान में उतारा. वह अब एक और खूबसूरत अभिनेत्री माधुरी दीक्षित को 2019 के लोकसभा के चुनावों में टिकट देना चाहती थी. हालांकि माधुरी की ओर से चुनाव लड़ने का खंडन कर दिया गया पर इस से हमारे देश की राजनीतिक पार्टियों की जाति, धर्म के साथ साथ सुंदरता से मतदाताओं को बहलाने वाली पौराणिक सोच उजागर जरूर कर दी है। दो दिन पहले खबर थी कि भाजपा माधुरी दीक्षित को पुणे से लोकसभा चुनाव लड़ाने पर विचार कर रही है पर अब उन के प्रवक्ता ने कहा है कि यह खबर झूठी और काल्पनिक है.

असल में भाजपा अध्यक्ष अमित शाह पिछले दिनों 'संपर्क फौर समर्थन' अभियान के तहत देश की कई हस्तियों से मिलने उन के घर गए और उन्हें भाजपा सरकार की उपलब्धियों की जानकारी दीं. इसी सिलसिले में वह माधुरी दीक्षित से उन के मुंबई स्थित घर में मिले थे।

अब दो दिन पहले महाराष्ट्र के एक बड़े नेता ने ऐलान किया था कि माधुरी दीक्षित को 2019 का लोकसभा चुनाव पुणे से लड़ाने पर विचार किया जा रहा है।

तेजाब, हम आप के हैं कौन, दिल तो पागल है, साजन, देवदास जैसी कई सफल फिल्मों में काम कर मशहूर हुईं माधुरी दीक्षित कुछ साल पहले शादी कर के अपने पति के साथ अमेरिका में रहीं. कुछ समय बाद वह पति के साथ भारत लौट आईं. यहां आने के बाद उन्होंने एक दो फिल्मों में काम किया, पर अब पर्दे से नदारद हैं.

दरअसल हमारे देश का एक बहुत बड़ा वर्ग जाति, धर्म, वर्ग के साथ साथ सुंदरता को देख कर भी वोट करता है. मतदाताओं की इस मानसिकता का फायदा उठाते हुए राजनीतिक दलों ने फिल्म इंडस्ट्री से चुन चुन कर अभिनेता अभिनेत्रियों को टिकट देने शुरू किए. बेवकूफ मतदाता इन्हें सिर आंखों पर बैठा लेते हैं और इन के पक्ष में जमकर मतदान करते हैं.

लेकिन होता यह है कि ये लोग चुनने के बाद न तो संसद में नजर आते हैं, न ही अपने मतदाताओं के इलाके में. फिल्मी सितारों को संसद में कभी जनता के सवालों पर बोलते हुए नहीं सुना जाता.

हेमामालिनी अपने लोकसभा क्षेत्र मथुरा में जाट परिवार की बहू होने और बारबार शोले फिल्म का डायलौग 'चल धन्नो, बसंती की इज्जत का सवाल है', बोल कर मतदाताओं से वोट झटक लेती हैं. बेवकूफ मतदाता अपना बेशकीमती मत महज फिल्म के एक डायलौग पर खुश हो लुटा देता है। मतदाता को अपने वोट की कीमत पता ही नहीं है. 5 साल तक अगर वह नेताओं से इलाके का विकास न होने का रोना रोता है तो महज इसी गलती की वजह से कि उस ने अपना मत महज हीरोइन को देख कर, नाम सुन कर, उस की खूबसूरती के चर्चे सुन कर बर्बाद कर दिया था.

आप जिस नुमाईंदे को चुन रहे हैं उस की सोच क्या है, इलाके में बिजली, पानी, सड़कों, अस्पताल, स्कूल, कौलेज का इंतजाम करवा देना मात्र सही मायने में विकास नहीं कहलाता, इन के साथसाथ असली विकास उस क्षेत्र में जाति, धर्म, वर्ग, ऊंचनीच के भेदभाव रहित सोच का विकास और फैलाव करने में अपना योगदान देता है. अपने कामों से बराबरी की सोच को क्षेत्र में विकसित करता है. वही लोकतंत्र का सच्चा प्रतिनिधि माना जाता है. लोकतंत्र की मजबूती इसी में है.

जगह जगह दंगे फसाद, जातीय, धार्मिक तनाव का वातावरण लोकतांत्रिक सोच के अभाव में उत्पन्न होती है. नेताओं के बयानों से एक वर्ग में गुस्सा तो दूसरा खुश इसीलिए होता है क्योंकि नेता की सोच भेदभाव और पक्षपातपूर्ण होती है.

राजनीतिक दलों की ऐसी संकीर्ण सोच पर लानत है. क्या वे ऐसे उम्मीदवार नहीं ढूंढ सकते जो देश की समस्याओं को अच्छे से समझते हों, विशेषज्ञ हों और वे गरीबी, भेदभाव, छुआछूत, शिक्षा, चिकित्सा, तकनीक, विज्ञान जैसे विषयों पर देश के लिए कुछ उल्लेखनीय काम कर सकें.

ऐसा नहीं है कि ऐसे योग्य लोग हैं नहीं, भरे पड़े हैं पर राजनीतिक दलों को विकास में योगदान देने वाले योग्य लोग नहीं, वोट बटोरने वाले, उन्हें जिताने वाले उम्मीदवार चाहिए. ऐसे उम्मीदवार चाहिएं जो जनता को बहला कर, फुसला कर, नाच गा कर, भावनात्मक मुद्दों को आगे कर के संसद और विधानसभाओं में पहुंच सकें.

दरअसल राजनीतिक पार्टियां मतदाताओं का ध्यान भंग करने, उन का विवेक खत्म करने के लिए पौराणिक चालें चलने की कोशिश करती हैं. इंद्र अपने विरोधियों को पस्त करने के लिए हमेशा अप्सराओं का इस्तेमाल करते थे. हमारे राजनीतिक दल खूबसूरत हीरोइनों का इस्तेमाल कर मतदाताओं का विवेक खत्म करने की कोशिशें करती हैं. एकाध को छोड़ कर कोई भी हीरोइन अपने क्षेत्र के मतदाताओं की समस्याओं का समाधान करने में नाकाम रही हैं.

जनता फिल्मी सितारों के अभिनय को देख कर अपना मनोरंजन कर सकती है लेकिन अगर वह उन की खूबसूरती देख कर मनोरंजन के नाम पर अपना भविष्य उन्हें सौंपती है तो यह हद दर्जे की बेवकूफी ही है।

कविता का सम्मान अब भी शेष है इस देश में

अपने कविता संग्रह 'रिलेशनशिप' के लिए सन 1981 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कटक (ओडिशा) के नब्बे वर्षीय कवि जयंत महापात्र को इस बार 'पोएट लौरेट अवार्ड' के लिए चुना गया है। कविता का सम्मान अभी शेष है इस देश में।

मुंबई का बहुप्रतीक्षित 'टाटा लिटरेचर लाइव' 15 नवंबर से 18 नवंबर तक नेशनल सेंटर फॉर द परफॉर्मिंग आर्ट्स (नरीमन प्वाइंट), पृथ्वी थिएटर (जुहू) और टाइटल वेव्स एंड सेंट पॉल्स इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिकेशन एजुकेशन (बांद्रा) में आयोजित हो रहा है। इस उत्सव में दुनिया भर के प्रशंसित लेखकों, बुद्धिजीवियों और अन्वेषकों को सुनने का अवसर मिलता है। इस साहित्य उत्सव में हर वर्ष किसी एक प्रतिष्ठित कवि-साहित्यकार और एक पत्रकार को सम्मानित किया जाता है। अपने कविता संग्रह 'रिलेशनशिप' के लिए सन् 1981 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कटक (ओडिशा) के कवि जयंत महापात्र को इस बार 'पोएट लौरेट अवार्ड' के लिए नामित किया गया है। नब्बे वर्षीय महापात्र को यह पुरस्कार इसी सप्ताह टाटा लिटरेचर लाइव में दिया जाएगा। साहित्य में इस पुरस्कार से अब तक वीएस नायपॉल, गिरीश कर्नाड, अमिताभ घोष, महाश्वेता देवी, गुलजार, विक्रम सेठ, केकी दारूवाला आदि सम्मानित हो चुके हैं।

अंग्रेजी साहित्य में अपनी एक अलग पहचान रखने वाले कवि-लेखक जयंत महापात्र अपनी ओजस्वी कृतियों एवं बेबाक विचारों के लिए पूरी दुनिया में जाने जाते हैं। उनको सन 2009 में पद्मश्री पुरस्कार से नवाजा गया था। कुछ वक्त पहले जब देश में असहिष्णुता को लेकर साहित्यकारों द्वारा पुरस्कार वापस करने का सिलसिला चला तो उन्होंने कवि-साहित्यकारों के सुर में सुर मिलाते हुए पद्मश्री पुरस्कार लौटा दिया था। उस समय उन्होंने कहा था कि देश में साहित्यकारों, लेखकों के लिए जिस तरह की असहिष्णुता दिखाई जा रही है, वह उन्हें व्यथित करती है और प्रतिवाद स्वरूप वे अपना पुरस्कार वापस कर रहे हैं।

राष्ट्रपति को लिखे पत्र में जयंत महापात्र ने साफ किया था कि राष्ट्र के प्रति उनका गहरा सम्मान है और पुरस्कार वापस करने का निर्णय राष्ट्र के प्रति अपमान नहीं है। असहिष्णुता के वातावरण को लेकर देश भर में जारी पुरस्कार वापसी अभियान को ओडिशा में पुरजोर विरोध किया गया था लेकिन

जयंत महापात्र ने अपना पद्मश्री असहिष्णुता के वातावरण के लेकर वापस करने का एलान कर सभी चकित कर दिया। इससे पहले 1981 में उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया था।

अपने जीवन और साहित्य-यात्रा के बारे में जयंत महापात्र बताते हैं कि 'मेरा बचपन बहुत सुखद नहीं था। भौतिकी में शोध करने के बाद चालीस की उम्र में मैंने कविताएं लिखनी शुरू कीं। किताबें पढ़ना मुझे हमेशा आनंदित करता रहा है। अच्छी किताबों की मुग्ध करने वाली भाषा की खोज ही अंततः मुझे कविताओं की ओर ले गई। मेरा ज्यादातर लेखन अंग्रेजी में ही है, क्योंकि मेरी पढ़ाई-लिखाई अंग्रेजी में हुई लेकिन बाद में मैं ओडिया में भी लिखने लगा, क्योंकि बहुत सारी चीजें आप मातृभाषा में ही बेहतर ढंग से अभिव्यक्त कर सकते हैं। मेरा जीवन कटक में बीता, जहां मेरे पूर्वज रहते थे। मेरे लिए कविताएं लिखना आसान नहीं है लेकिन फिर भी मैं लिखता हूं, क्योंकि मेरे भीतर की ऐसी कुछ चीजें हैं, जो मरने से, खत्म होने से इन्कार करती हैं। वे कविता की शक्ल में बाहर आती हैं।

इसलिए कविता लिखने की प्रक्रिया मेरे लिए तकलीफ से गुजरने जैसी है। मेरी कविताएं ओडिशा के इतिहास, परंपरा और प्रथाओं से बेहद प्रभावित हैं। जैसे, मेरी हंगर कविता में 1866 के उस भयंकर अकाल का जिक्र आया है, जिसमें भूख से छटपटाती मेरी दादी मरते-मरते बची थी। तब हजारों लोगों ने आम की गुठली खाकर जान बचाई थी। ठीक इसी तरह मेरी 'धोली' कविता धोली नदी के उस रक्तरंजित इतिहास के बारे में बताती है, जिसके तट पर सम्राट अशोक के सैनिकों ने करीब एक लाख लोगों की हत्या की थी। मुझे भारत में आधुनिक अंग्रेजी कविता की नींव तैयार करने वाले तीन कवियों में से एक कहा जाता है, तो इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूं।'

जयंत महापात्र अपनी 'जयंत जानता जिसे नहीं' कविता में लिखते हैं - 'बहुत पहले की बात है / उस दिन माँ ने पूछा / कौन है वो? / किसके साथ बात कर रहे थे? / उत्तर दिया मैंने, कालेज का पुराना एक साथी / बहुत दिनों से मिला नहीं था न ! / ईसाई ?/ नहीं, हिंदू लड़का। / न जाने क्यों मुह बिचका दिया / माँ का वह चेहरा हमेशा मन में रहता है /... न जाने क्यों / उस दिन माँ ने मुँह बिचका लिया था / न जाने क्यों / आज एक मित्र ने मुँह बिचका लिया / मुझसे पूछा / आप क्या ईसाई हैं ?/ जयंत जानता नहीं।' पांच अगस्त - 2018 को बंगलुरु में आयोजित हुए 'कविता महोत्सव' में भी जयंत महापात्र की उपस्थिति को रेखांकित करती

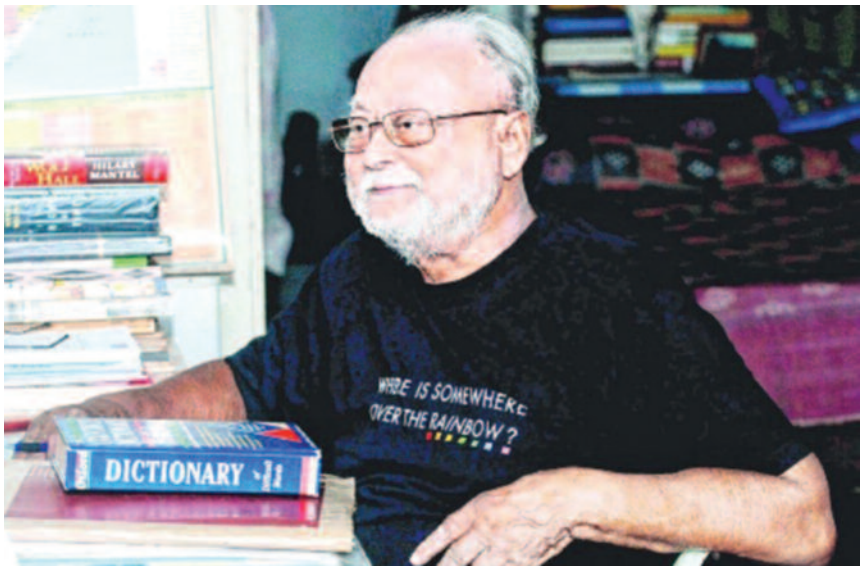

हुई लवली गोस्वामी लिखती हैं- 'मैंने जयंत महापात्र को देखा, बात की। उनका कविता पाठ सुना। वे मंच की सजावटी हलकी रौशनी में कविता नहीं पढ़ नहीं पा रहे थे। लोगों को मोबाइल की रौशनी देते हुए उनके बगल में खड़े होकर उनकी मदद करनी पड़ी। जब वे मंच से उतरे, हाल में उपस्थित सभी लोग उनके सम्मान में खड़े हुए। तालियों से सभागार गूंज रहा था। यह इस आधुनिकतम शहर की बात है। वह शहर, जिसे सिर्फ पैसे से जोड़कर देखा जाता है। मुझे एहसास हुआ, कविता का सम्मान अब भी शेष है इस देश में। ऐसा ही अनुभव हर बार तब हुआ है, जब मैंने अपने प्रिय कवियों को घेरती भीड़ देखी है। कविता के प्रेमी प्रेत की तरह दुनिया के अँधेरे में अदृश्य उपस्थित रहते हैं। कवि सिर्फ तब प्रकट होते हैं, जब उनका कवि उनके समक्ष होता है, उन्हें बुलाता है, उनका आह्वान करता है।'

जयंत महापात्र की एक प्रसिद्ध कविता है 'माटी', प्रस्तुत है...

''नहीं समझ पा रहा हूँ
क्यों इस मिट्टी के लिए मैं अंधा
इस लाल मैली मिट्टी के लिए
जिस मिट्टी के लिए
कभी– कभी कहता है कवि
कुछ भी मत निकालो
पानी, सार या हृदय का हल्कापन
जिस मिट्टी के लिए कहते हैं नेता
दोहन कर दो सभी लोहे के पत्थर
बाक्साइट और युगों– युगों से
भीतर सोया हुआ ईश्वर ।
और जिस मिट्टी से
कोई नहीं उठाएगा
पुलिस गोली में मरे हुए लोगों के
फटी आँखों वाले शून्य चेहरे
मंत्री के विवेक की अंतिम धकधक
और जिस मिट्टी में स्वयं नहीं
आने वाले समय की भूख
तब भी यह मिट्टी मेरी
कभी भी नहीं की मजदूरी
ढोयी नहीं मिट्टी इधर से उधर
किंतु मिट्टी की
अनजान–नीरवता से
पाया हूँ थोडा–सा सत्य
घर तो मेरा बहुत दूर
दिखाई देता नहीं है मुझे अपनी आँखों से
नहीं है उसकी छत, नहीं कोई दीवार
नहीं कोई झरोखा या कोई द्वार
किंतु वहाँ उस मिट्टी की लाश के ऊपर
मुरझा जाता है मेरे हृदय का फूल
खोकर अपनी एक एक कोमल पंखुडी।''

वायु प्रदूषण से हो सकता है अग्नाशय का कैंसर, ये हैं बचाव के आसान तरीके

वायु प्रदूषण और फेफड़ों के कैंसर के परस्पर संबंध के बारे में दशकों से जानकारी है। विज्ञान ने यह साबित किया है कि वायु प्रदूषण कैंसर के जोखिम को कई गुना बढ़ाता है और अत्यधिक वायु प्रदूषण फेफड़े के अलावा दूसरे अन्य तरह के कैंसर का कारण बन सकता है। 2013 में 'इंटरनेशनल एजेंसी फॉर रिसर्च ऑन कैंसर (आईएआरसी)' ने बाहरी वायु प्रदूषण को कैंसर का२ प्रमुख कारण माना था। प्रदूषण इसलिए, कैंसरकारी माना जाता है क्योंकि यह धूम्रपान और मोटापे की तरह प्रत्यक्ष रूप से कैंसर के बढ़ते जोखिम से जुड़ा है। यह भी महत्वपूर्ण है कि वायु प्रदूषण सभी को प्रभावित करता है। शोध से यह सामने आया है कि हवा में मौजूद धूल के महीन कण जिन्हें 'पार्टिकुलेट मैटर' या पीएम कहा जाता है, वायु प्रदूषण का एक बड़ा हिस्सा बनते हैं। सबसे महीन आकार का कण, जो कि एक मीटर के 25 लाखवें हिस्से से भी छोटा होता है प्रदूषण की वजह से होने वाले फेफड़ों के कैंसर की प्रमुख वजह है।अनेक अनुसंधानों और मैटा एनेलिसिस से यह साफ हो गया है कि वायु में पीएम की मात्रा 2.5 से अधिक होने के साथ ही फेफड़ों के कैंसर का जोखिम भी बढ़ जाता है। मैक्स हेल्थकेयर के ओंकोलॉजी विभाग में प्रींसिपल कंस्लटेंट डॉ. गगन सैनी ने कहा कि पीएम 2.5 से होने वाले नुकसान का प्रमाण फ्री रैडिकल, मैटल और ऑर्गेनिक कोंपोनेंट के रूप में दिखाई देता है। ये फेफड़ों के जरिए आसानी से हमारे रक्त में घुलकर फेफड़ों की कोशिकाओं को क्षति पहुंचाने के अलावा उन्हें ऑक्सीडाइज भी करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप शरीर को नुकसान पहुंचता है। पीएम 2.5 सतह में आयरन, कॉपर, जिंक, मैंगनीज तथा अन्य धात्विक पदार्थ और नुकसानकारी पॉलीसाइक्लिक एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन एवं लिपोपॉलीसैकराइड आदि शामिल होते हैं। ये पदार्थ फेफड़ों में फ्री रैडिकल बनने की प्रक्रिया को और बढ़ा सकते हैं तथा स्वस्थ कोशिकाओं में मौजूद डीएनए के लिए भी नुकसान दायक होते हैं। पीएम 2.5 शरीर में

इफ्लेमेशन का कारण भी होता है। इंफ्लेमेशन दरअसल, रोजमर्रा के संक्रमणों से निपटने की शरीर की प्रक्रिया है लेकिन पीएम 2.5 इसे अस्वस्थकर तरीके से बढ़ावा देती है और केमिकल एक्टीवेशन बढ़ जाता है। यह कोशिकाओं में असामान्य तरीके से विभाजन कर कैंसर का शुरूआती कारण बनता है। फेफड़ों के कैंसर संबंधी आंकड़ों के अध्ययन से कैंसर के 80,000 नए मामले सामने आए हैं। इनमें धूम्रपान नहीं करने वाले भी शामिल हैं और ऐसे लोगों में कैंसर के मामले 30 से 40 फीसदी तक बढ़े हैं। इसके अलावा, मोटापा या मद्यपान भी कारण हो सकता है, लेकिन सबसे अधिक जोखिम वायु प्रदूषण से है।डॉ. सैनी का कहना है कि दिल्ली में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में फेफड़ों के मामले 2013-14 में 940 से दोगुने बढ़कर 2015-16 में 2,082 तक जा पहुंचे हैं, जो कि शहर मे वायु प्रदूषण में वृद्धि का सूचक है। धूम्रपान नहीं करने वाले लोगों में फेफड़ों के कैंसर के मरीजों में 30 से 40 वर्ष की आयुवर्ग के युवा, अधिकतर महिलाएं और साथ ही एडवांस कैंसर से ग्रस्त धुम्रपान न करने वाले लोग शामिल हैं।

डॉक्टर सैनी ने कहा, 'मैं अपने अनुभव से यह कह सकता हूं कि फेफड़ों के कैंसर के मामले लगातार बढ़ रहे हैं और मैं लोगों से इन मामलों की अनदेखी नहीं करने का अनुरोध करता हूं। साथ ही, यह भी सलाह देता हूं कि वे इसकी वजह से सेहत के लिए पैदा होने वाले खतरों से बचाव के लिए तत्काल सावधानी बरतें।' वायु प्रदूषण न सिर्फ फेफड़ों के कैंसर से संबंधित है बल्कि यह स्तन कैंसर, जिगर के कैंसर और अग्नाशय के कैंसर से भी जुड़ा है। वायु प्रदूषण मुख और गले के कैंसर का भी कारण बनता है। ऐसे में मनुष्यों के लिए एकमात्र रास्ता यही बचा है कि वायु प्रदूषण से मिलकर मुकाबला किया जाए। संभवतः इसके लिए रणनीति यह हो सकती है कि इसे एक बार में समाप्त करने की बजाए इसमें धीरे-धीरे प्रदूषकों को घटाने के प्रयास किए जाएं और इस संबंध में सख्त कानून भी बनाए जाएं।

कई प्रकार के होते हैं बच्चों पेट में पाए जाने वाले कीड़े

छोटे बच्चों के पेट में अक्सर कीड़े होने की समस्या हो जाती है। पेट में कीड़े होने के कारण जहां बच्चे पेट दर्द के कारण हर समय रोते रहते हैं वहीं इससे उनके शारीरिक और मानसिक विकास में बाधा पहुंचती है। बच्चों में कीड़े होने पर अलग-अलग लक्षण दिखाई देते हैं क्योंकि पेट में होने वाले कीड़े कई प्रकार के होते हैं। पेट में पाए जाने वाले ये वॉर्म या कृमि प्रजनन क्रिया के बाद आंतो में अण्डे देते हैं। इनके बढ़ जाने से शिशु का पाचन और स्वास्थ्य प्रभावित होता है और उसमें कई तरह के लक्षण नजर आते हैं। आइए बताते हैं बच्चों को किन प्रकार के कीड़ों से होता है खतरा और उनके क्या हैं लक्षण।

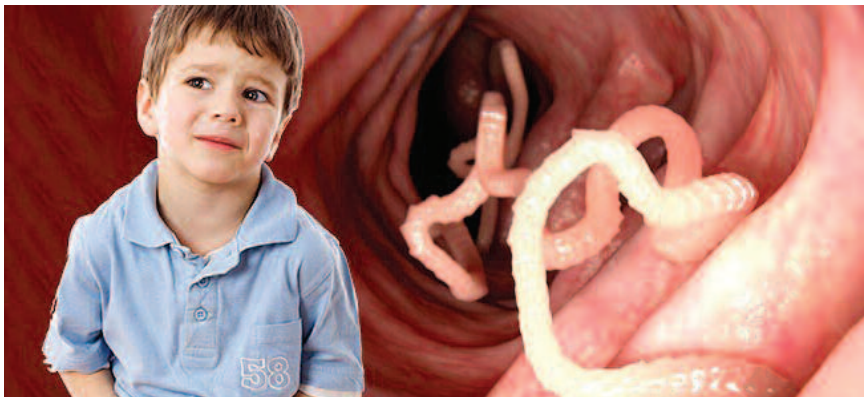

राउंडवॉर्म इंफेक्शनः राउंडवॉर्म सबसे ज्यादा आंतों में पाए जाने वाले कीड़े हैं। ये कीड़े केंचुए जैसे लम्बे 4-12 इंच और पतले होते हैं और आमतौर पर छोटी आंतों में रहते हैं। आमतौर पर ये कीड़े मटमैले या पीले रंग के होते हैं। आंतों में ये कीड़े प्रजनन के द्वार तेजी से अपनी संख्या बढ़ाते हैं। संख्या बढ़ने पर कभी-कभी ये कीड़े अमाशय, प्लीहा (तिल्ली) और फेफड़े में भी चले जाते हैं।

राउंडवॉर्म इंफेक्शन के लक्षणः राउंडवॉर्म इंफेक्शन के कारण आंतो के काम में रुकावट उत्पन्न होती है, जिससे बच्चे का भोजन ठीक से नहीं पच पाता है। ऐसे में खाना खाने के बाद बच्चे को मितली आने लगती है। पेट में दर्द रहने लगता है तथा मरोड़ के साथ कभी कब्ज हो जाता है, या कभी दस्त आने लगते हैं। नींद में बच्चों के मुंह से लार बहती है और बच्चे दांत पीसने लगते हैं। शिशुओं के नाक-मुंह में खुजली होती है। कभी-कभी शरीर पर पित्ती भी उछल आती है।

टेपवॉर्म इंफेक्शनः टेपवॉर्म बच्चों के पेट में पाए जाने वाले खतरनाक कीड़े होते हैं। शुरूआत में ये कीड़े पेट में दर्द का कारण बनते हैं मगर संख्या बढ़ जाने पर ये कीड़े मस्तिष्क तक पहुंच जाते हैं और नर्वस सिस्टम पर अटैक कर देते हैं। टेपवॉर्म्स की लम्बाई 31 से 62 मिमी, तक होती है। आमतौर पर ये कीड़े मल के साथ निकल जाते हैं। टेपवॉर्म आकार में चिपटा, गांठदार और रंग में सफेद होता है। टेपवॉर्म से संक्रमित रोगी की जाँच, उसके मल के द्वारा की जाती है। इन टेपवॉर्म का आकार बहुत बड़ा हो, तो इनके बाहर निकलते समय थोड़ा दर्द हो सकता है। बरसात के मौसम में या आम दिनों में टेपवॉर्म का खतरा पत्ते वाली सब्जियों से ज्यादा होता है।

टेपवॉर्म इंफेक्शन के लक्षणः टेपवॉर्म सीधे नर्वस सिस्टम को प्रभावित करते हैं इसलिए इनके होने पर दिमाग पर ज्यादा असर होता है। दिमाग में सूजन के कारण बच्चों को अक्सर सिर में दर्द, उल्टी और चक्कर आने की समस्या बनी रहती है।

पिनवॉर्म्सः पिनवॉर्म्स 2.5 मिमी होते हैं। ये कभी-कभी पेशाब करने की नली या योनि के पास भी पहुंच जाते हैं और वहां खुजली और जलन पैदा करते हैं। ये कीड़े बच्चों के पेट में सबसे ज्यादा पाए जाते हैं। पिनवॉर्म्स ज्यादातर बच्चों को ही शिकार बनाते हैं। पिनवॉर्म्स के अंडे मल द्वारा धूल, मिटटी, पानी, सब्जियों आदि तक पहुंच जाते हैं, जिनके सेवन मात्र से ये अंडे पेट में पहुंच जाते हैं।

पिनवॉर्म्स होने के लक्षणः इससे उत्पन्न रोग का मुख्य लक्षण रक्त की भारी कमी हो जाना है, जिससे शरीर और चेहरा पीला पड़ जाता है। भूख घट जाती है तथा कमजोरी बढ़ती है। कई बच्चों के प्राइवेट पार्ट में जलन और दर्द की समस्या हो जाती है।

पेट के कीड़ों का उपचारः बच्चों या बड़ों की आंत में कीड़े पड़ गये हों तो कच्चे आम की गुठली का सेवन करने से कीड़े मल के रास्ते बाहर निकल जाते हैं। इसके लिए कच्चे आम की गुठली का चूर्ण दही या पानी के साथ सुबह-शाम सेवन करें। इसके नियमित सेवन से कुछ दिनों में ही आंत के कीड़े बाहर निकल जायेंगे। अनार के छिलकों को सुखाकर इसका चूर्ण बना लीजिए। यह चूर्ण दिन में तीन बार एक-एक चम्मच लीजिए। कुछ दिनों तक इसका सेवन करने से पेट के कीड़े पूरी तरह से नष्ट हो जाते हैं।

गौतम गंभीर ने भारी दिल से लिया फैसला

फेसबुक पर किया रिटायरमेंट का ऐलान

लंबे समय से भारतीय क्रिकेट टीम से बाहर चल रहे बाएं हाथ के दिग्गज बल्लेबाज गौतम गंभीर ने मंगलवार को संन्यास की घोषणा कर दी। गौतम गंभीर ने संन्यास की जानकारी अपने फेसबुक पेज पर दी है। वह कुछ दिनों पहले ही 37 साल के हुए थे। उनके क्रिकेट भविष्य पर आए दिन लोग सवाल पूछते रहते हैं लेकिन आज उन्होंने क्रिकेट के सभी प्रारूपों से संन्यास की घोषणा कर सभी कयासों पर विराम लगा दिया।

क्रिकेट के तीनों प्रारूपों में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर 10,000 से अधिक रन बनाने वाले दिल्ली के इस बल्लेबाज ने अपने पोस्ट में कहा, 'अपने देश के लिए 15 साल से भी अधिक समय तक क्रिकेट खेलने के बाद मैं इस खूबसूरत खेल से अलविदा कहना चाहता हूं।' दिल्ली और आंध्र के बीच छह दिसंबर से फिरोजशाह कोटला में होने वाला रणजी ट्रॉफी मैच भारत के सबसे सफल सलामी बल्लेबाजों में से एक गौतम गंभीर के लगभग दो दशक तक चले चमकदार करियर का अंतिम मैच होगा।

उन्होंने कहा, 'आंध्र के खिलाफ अगला रणजी ट्रॉफी मैच मेरा आखिरी मैच होगा। मेरे क्रिकेट सफर का अंत उसी फिरोजशाह कोटला मैदान पर होगा जहां से इसकी शुरूआत हुई थी।' बाएं हाथ के इस बल्लेबाज को कभी हार नहीं मानने के अपने जज्बे के लिए जाना जाता था। उन्होंने 2007 में विश्व टी20 और 2011 में विश्व कप में भारत की खिताबी जीत में अहम भूमिका निभाई थी। उनकी अगुआई में कोलकाता नाइटराइडर्स ने दो बार आईपीएल खिताब जीते।

गंभीर ने संन्यास की घोषणा के साथ ही इच्छा जतायी कि वह अगले जन्म में भी क्रिकेटर बनकर भारत की तरफ से यह खेल खेलना चाहेंगे। उन्होंने कहा, 'तमाम दर्द और पीड़ाओं, भय और असफलताओं के बावजूद मुझे अपनी अगली जिंदगी में भी इन्हें दोहराने का कोई गम नहीं होगा। लेकिन निश्चित तौर पर भारत के लिए कुछ जीत, कुछ और अधिक शतक और संभवतः अगली

अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में प्रदर्शन

टेस्ट

मैच, पारी, रन, बेस्ट, औसत, अर्धशतक, शतक

58, 104, 4154, 206, 41.95, 22, 09

वनडे अंतरराष्ट्रीय

मैच, पारी, रन, औसत, अर्धशतक, शतक

147, 143, 5238, 150 39.68, 34, 11

टी-20 अंतरराष्ट्रीय

मैच, पारी, रन, औसत, अर्धशतक, शतक

37, 36, 932, 75, 27.41, 07, 00

जिंदगी में पारी में पांच विकेट लेने के कुछ कारनामे भी करना चाहूंगा।'

गंभीर ने न्यूजीलैंड में सीरीज में जीत और ऑस्ट्रेलिया में सीबी सीरीज जीतने को अपने करियर की महत्वपूर्ण उपलब्धियां बताई। उन्होंने कहा, 'लेकिन मुझे उम्मीद है कि ऑस्ट्रेलियाई दौरे पर गई वर्तमान भारतीय टीम हमारी उपलब्धियों को पीछे छोड़ने में सफल रहेगी।' गंभीर ने अपने संदेश में भारतीय टीम, आईपीएल की टीमों केकेआर और दिल्ली डेयरडेविल्स तथा दिल्ली रणजी टीम के अपने साथियों के साथ साथ अपने प्रशिक्षकों विशेषकर बचपन के अपने कोच संजय भारद्वाज, पार्थसारथी शर्मा और ऑस्ट्रेलिया के पूर्व बल्लेबाज जस्टिन लैंगर का भी आभार व्यक्त किया।

गंभीर ने कहा, 'यह थोड़ा महत्वकांक्षी लगता है लेकिन मैंने देखा है कि इच्छाएं सच होती है। दो विश्व कप, दोनों के फाइनल में सर्वोच्च स्कोर भी सपने थे और मैंने केवल आपके लिए विश्व कप जीतने का सपना देखा था। मुझे लगता है कि कोई था जो मेरी पटकथा लिख रहा था लेकिन अब उसकी स्याही खत्म हो गयी है। लेकिन इस बीच उसने कुछ आकर्षक अध्याय लिखे। इनमें दुनिया की नंबर टेस्ट टीम का हिस्सा बनना सबसे अहम है। मैं जिस ट्रॉफी को बड़े प्यार से निहारता हूं वह 2009 में आईसीसी के वर्ष के टेस्ट बल्लेबाज के लिए मिली ट्रॉफी है।'

अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट का सफर

2007 टी-20 विश्व कप में गौतम गंभीर भारतीय टीम का हिस्सा थे। पूरे टूनार्मेंट में गंभीर ने सबसे ज्यादा रन बनाए थे। फाइनल में गंभीर की पारी अहम रही थी। उन्होंने पाकिस्तान के खिलाफ 54 गेंदों पर 75 रन की जोरदार पारी खेली थी। 2008 तक गंभीर क्रिकेट के हर प्रारूप की भारतीय टीम का हिस्सा बन गए थे। गौतम गंभीर के लिए 2009 यादगार साल रहा। इसी साल गंभीर अपने पहले विदेश दौरे पर न्यूजीलैंड गए और गए थे और भारत ने 41 साल बाद मेजबान टीम को उसी की धरती पर हार का स्वाद चखाया।

भारत की इस जीत में गंभीर की भूमिका महत्वपूर्ण रही। गंभीर ने उस टेस्ट सीरीज में 445 रन बनाए थे। इसी साल गंभीर सर्वश्रेष्ठ टेस्ट क्रिकेटर भी बने थे। 2009 में वह आईसीसी टेस्ट रैंकिंग के शीर्ष पर पहुंचे थे। गौतम गंभीर ने अपना आखिरी टेस्ट मैच नवंबर 2016 में इंग्लैंड के खिलाफ खेला था। वहीं उन्होंने सीमित ओवर क्रिकेट में आखिरी बार जनवरी 2013 में इंग्लैंड के खिलाफ वनडे मैच और दिसंबर 2012 में पाकिस्तान के खिलाफ टी20 अंतरराष्ट्रीय मैच खेला था।

केकेआर को बनाया दो बार चैंपियन

इंडियन प्रीमयर लीग (आईपीएल) के पहले सत्र में गंभीर ने दिल्ली डेयरडेविल्स के लिए 534 रन बनाए थे। वह पहले सत्र में दूसरे सबसे ज्यादा रन बनाने वाले खिलाड़ी थे।

शुरूआती दो सत्र में गंभीर ने 1000 रन अपने खाते में जोड़ डाले थे। उनके दमदार प्रदर्शन को देखते हुए शाहरुख खान की फ्रेंचाइजी कोलकाता नाइट राइडर्स (केकेआर) ने 2010 में उन्हें 2.4 मिलियन डॉलर खर्च कर उन्हें अपनी टीम में शामिल किया था। गौतम गंभीर को इस टीम की कमान भी सौप दी गई थी। उन्होंने अपनी कप्तानी में केकेआर को 2012 और 2014 में चैंपियन बनाया। गंभीर 2017 में केकेआर को छोड़कर दिल्ली डेयरडेविल्स वापस आ गए थे। उन्हें इस टीम की कप्तानी सौंपी गई थी। लेकिन शुरूआती मैचों के बाद पहले उन्होंने कप्तानी छोड़ी फिर टीम मं अपनी जगह भी छोड़ दी थी।

अपनी कप्तानी में जिताई थी सीरीज

2010 में न्यूजीलैंड के खिलाफ गौतम गंभीर को भारतीय टीम की कप्तानी सौंपी गई थी। भारत ने ये सीरीज 5-0 से अपने नाम की थी। उनका खुद का प्रदर्शन भी शानदार रहा था। जिसके लिए उन्हें मैन ऑफ द सीरीज के पुरस्कार से भी नवाजा गया था।

जड़े थे लगातार पांच टेस्ट शतक

अंतराष्ट्रीय क्रिकेट में गौतम गंभीर के नाम कई रिकॉर्ड शामिल हैं। 2009 में गंभीर टेस्ट क्रिकेट में लगातार पांच शतक जड़ने वाले खिलाड़ी बन गए थे। इसके अलावा गौतम गंभीर ऐसे क्रिकेटर हैं जिन्होंने 300 से भी ज्यादा रन चार टेस्ट मैच में बनाए थे।

युवाओं को मौका देने के लिए छोड़ी रणजी की कप्तानी

गौतम गंभीर ने इसी माह दिल्ली रणजी टीम की कप्तानी छोड़ दी थी। युवा खिलाड़ियों को मौका देने की बात कहते हुए उन्होंने ये फैसला लिया है। उन्होंने अपने ट्वीट में लिखा ' अब समय आ गया है कि युवा खिलाड़ियों को ये जिम्मेदारी सौंप दी जाए। इसलिए मैं दिल्ली एंड डिस्ट्रिक्ट क्रिकेट एसोसिएशन (डीडीसीए) से आग्रह करता हूं कि वे इस रोल के लिए मेरा चयन ना करें। मैं पीछे रहकर नए कप्तान का मार्गदर्शन करूंगा।

हैरतअंगेज टेक्नोलॉजी से भरपूर है रजनीकांत और अक्षय की फिल्म 2.0

कलाकार- रजनीकांत, एमी जैक्सन, अक्षय कुमार
निर्देशक- एस. शंकर
मूवी टाइप- थ्रिलर,ऐक्शन,Sci-Fi
अवधि- 2 घंटा 24 मिनट

लंबे समय के इंतजार के बाद भारत की सबसे महंगी फिल्म 2.0 बड़े पर्दे पर रिलीज हो गई है। इस फिल्म में लीड रोल में अक्षय कुमार, रजनीकांत, एमी जैक्सन, अदिल हुसैन और सुधांशु पांडे नजर आयेंगे। फिल्म के किरदारों की बात की जाए तो इस फिल्म में अक्षय कुमार एक शैतान का रोल निभा रहे है। वही रजनीकांत फिल्म के हीरो हैं। यह फिल्म 2010 में आयी तमिल एन्थिरन फिल्म का दूसरा पार्ट है। यही एन्थिरन फिल्म बॉलीवुड साल 2010 में 'रोबोट' नाम से रिलीज की गयी थी। इस फिल्म की शूटिंग जब से शुरू हुई थी तब से लेकर रिलीज होने तक चर्चा में रही। सबसे पहले तो इस फिल्म के बजट ने सुर्खियां बटौरी और फिर ये कानूनी पचड़ो में पड़ने के कारण खबरों में आई। एक इंटरव्यू के दौरान खुद रजनीकांत ने बताया था कि इस फिल्म पर 600 करोड़ की भारी- भरकम लागत लगी है। इस फिल्म को बनाने से पहले काफी रिसर्च की गयी है। हाई टेक्नोलॉजी पर बनने वाली ये भारत की पहली फिल्म है इस लिए ये कयास लगाए जा रहे है कि अभी तक की सबसे ज्यादा कमाई करने वाली फिल्म 'बाहुबली 2 ' का रिकार्ड तोड़ सकती हैं।

फिल्म की कहानी

फिल्म की कहानी की शुरूआत चेन्नई शहर में अचानक लोगों के हाथों से मोबाइल उड़ जाने से होती है। जनता खौफ में आ जाती है और कंप्लेन लेकर पुलिस तक पहुंच जाती हैं। उसके बाद शुरू होती है फिल्म की कहानी– एक पक्षीविज्ञानी पक्षी राजन से जो सुसाइड कर लेता है ताकि वो इंसानों से बदला ले सके क्योंकि मोबाइल फोन के रेडिएशन से पक्षियों को नुकसान पहुंच रहा है। इस पक्षीविज्ञानी का रोल अक्षय कुमार निभा रहे हैं। जिन्होंने अपना काम बखूबी निभाया है। इसके बाद फिल्म में एंट्री होती है वसीकरण (रजनीकांत) और उनकी असिस्टेंट नीला (एमी जैक्सन) की। नीला एक इंसान जैसी दिखने वाली रोबॉट है। दोनों मिलकर पक्षी राजन से लड़ने की तरकीब ढूंढते हैं। इसके बाद शुरू होती है फिल्म की असली कहानी, जिसके बारे में जानने के लिए आपको ये फिल्म देखनी होगी।

क्यों देखें फिल्म

फिल्म दर्शकों को बांधने की जबरदस्त कोशिश करती नजर आती है, जिसके फर्स्ट हाफ में मोबाइल फोन्स से लोगों की जान लेने के सीन्स बेहतरीन बन पड़े हैं। सड़कों पर मोबाइलों का रैला आपको हैरान कर देगा, तो मोबाइल फोन्स से बना खतरनाक पक्षी भी भयानक है।

वहीं सेकंड हाफ में पक्षीराजन की कहानी आपको इमोशनल कर देती है। फिल्म '2.0' की कहानी लिखने वाले फिल्म के डायरेक्टर एस शंकर ने कमजोर स्क्रिप्ट भी तैयार की। फिल्म के पहले हिस्से में जहां रजनीकांत चिट्टी को वापस लाने के जद्दोजहद में लगे रहते हैं, वहीं अक्षय कुमार कहीं भी नहीं दिखाई देते। एक्ट्रेस एमी जैक्सन का फिल्म में कोई अहम रोल नहीं दिखा। वह महज एक फीमेल रोबोट बनकर रह गईं। अगर आप इस फिल्म का पूरा मजा उठाना चाहते हैं, तो इसे 3डी में ही देखें। आमतौर पर बॉलिवुड की 3डी फिल्मों में कुछ डांस या ऐक्शन सीक्वेंस ही 3डी में होते थे, लेकिन 2.0 पूरी फिल्म ही 3डी में शूट की गई है, इसलिए इसे 3डी में देखना आपके लिए बेहतर एक्सपीरियंस होगा।

'खोदा पहाड़ निकली चुहिया' फिल्म केदारनाथ का हाल भी कुछ ऐसा ही है

कलाकार - **सुशांत सिंह राजपूत , सारा अली खान**
निर्देशक - **अभिषेक कपूर**
मूवी टाइप - **रोमांस**
अवधि- **2 घंटा 24 मिनट**

अभिषेक कपूर की निर्देशन में बनी फिल्म केदारनाथ आज सिनेमाघरो में दस्तक दे चुकी है। इस फिल्म से अपने करियर की शुरूआत करने वाली सारा अली खान और सुशांत सिंह राजपूत फिल्म में लीड रोल में नजर आयेंगे।

फिल्म की कहानी

यह फिल्म उत्तराखंड में हुई केदारनाथ त्रासदी के दौरान दो लोगो के प्रेम की कहानी बयां करती है। इस फिल्म में सुशांत सिंह राजपूत (मंसूर) और सारा अली खान (मक्कू) का किरदार निभा रही है। जैसे की नाम से ही पता चल रहा है कि इस फिल्म में सुशांत सिंह राजपूत एक मुस्लमान लड़के का किरदार निभा रहे है। वहीं दूसरी तरफ सारा अली खान उर्फ मक्कू केदारनाथ के एक पडिंत की बेटी का किरदार निभा रही है। मक्कू और मंसूर एक- दूसरे से प्यार कर बैठते है, लेकिन धर्म अलग- अलग होने की वजह से दोनों एक नहीं हो पाते है। इसके बाद मक्कू की जबरन शादी करवा दी जाती है। सब खत्म हो जाता है, दोनों के सारे सपने बिखर जाते है, और फिर आती है उत्तराखंड के केदारनाथ धाम की सबसे बड़ी त्रासदी जिसे आज तक वहां के लोग अपने जहन से नहीं निकाल पाये है। त्रासदी के दौरान काफी कुछ होता है, लेकिन सिर्फ वही नहीं होता जो एक बतौर दर्शक की उम्मीद थी। बता दें कि इस फिल्म में जिस तरह से सारा अली खान ने अपना अभिनय किया है, वह वाक्य काबिलय तारीफ है। फिल्म के हर सीन में पूरी तरह से सारा ने अपनी जान डाल दी है। वह जितनी खूबसूरत है उतनी ही खूबसूबरत उनकी एक्टिंग भी है। सारा ने फिल्म केदारनाथ से यह साबित कर दिया है कि वह एक बेहद मंझी कलाकार है। वहीं दूसरी तरफ सुशांत सिंह राजपूत ने भी अपने किरदार को बाखूबी निभाया है। लेकिन यह फिल्म दर्शको को लुभाने में नाकाम साबित हुई है। क्योंकि इस फिल्म में न तो प्रेम कहानी को सही ढंग से फिल्माया गया है, न ही उत्तराखंड में हुई केदारनाथ त्रासदी को बाखूबी दिखाया गया । अभिषेक कपूर इस बार अपने निर्देशन में चूकते हुए नजर आये। फिल्म केदारनाथ दर्शको पर अपनी छाप छोड़ने में पूरी तरह से नाकाम रही है। इस फिल्म के गाने भी दर्शको पर अपना जादू नहीं चला पायें। लेकिन अगर आपको उत्तराखंड की खूबसूरती देखनी है तो आपको इस फिल्म में कई ऐसे नजारे देखने को मिलेंगे , जो वाक्य बेहद लुभावने है। केदारनाथ फिल्म की जब घोषणा हुई तब कहीं एक उम्मीद जागी कि भारतीय सिनेमा ने भारतीय परिपेक्ष्य में भी प्राकृतिक आपदाओं पर एक पूरी फिल्म बनाने की हिम्मत दिखाना शुरू कर दी है। इसी त्रासदी पर फिल्म 'केदारनाथ' आधारित है। मगर कुल मिलाकर मामला टोटल फिल्मी निकला! एक बोझिल सी प्रेम कथा जिसे देखना पहाड़ पर चढ़ने जितना ही थकाऊ था और अंत में बच्चों के कार्टून चैनल्स के ग्राफिक्स को टक्कर देते विजवल इफेक्ट्स और फिल्म खत्म हो जाती है।

हर कोई अपनी लाइफ में एक बार विदेश जाने का सपना जरूर देखता है. अक्सर यह इच्छा वीजा की झंझट भरी फॉर्मेलिटीज के चलते पूरी नहीं हो पाती, तो अब यहां जानें ऐसे देशों के नाम जहां आप बिना वीजा के अपनी फॉरेन ट्रिप की विश पूरी कर सकते हैं...

बिना वीजा के करें इन देशों की सैर...

अंटार्कटिका अंटार्कटिका घूमने का सपना है तो यहां जाना भी आसान है इस ट्रिप के लिए आपको वीजा की जरूरत नहीं है। यहां घूमने लायक जगह हैं- साउथ शेटलैंड आयलैंड, रोस आयलैंड, लिविंगस्टोन आयलैंड, एलिफेंट आयलैंड, लेक वोस्टोक।

भूटानकभी भारत का ही हिस्सा रहा भूटान देखने का मन है तो यहां भी बिना वीजा के जाया जा सकता है. यहां घूमने लायक जगह हैं- थिम्फू, पारो, रॉयल मानस नेशनल पार्क, जयगांव।

बोलीवियायह देश वेस्टर्न सेंट्रल साउथ अमेरिका में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- ला पाज, टूपिजा।

ब्रिटिश वर्जिन आयलैंडयह आयलैंड कैरेबियन सागर पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- रोड टाउन जो ब्रिटिश वर्जिन आयलैंड की राजधानी है, वर्जिन गोर्डा, बीफ आईलैंड।

कंबोडियायह साउथ ईस्ट एशिया में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- सीम रीप, कोह रोंग आयलैंड।

कॉमनवेल्थ ऑफ डोमिनिकायह एक आयलैंड देश है जो कैरेबियन सागर पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- पोर्टसमाउथ, महौत।

कूक आयलैंडयह देश साउथ पैसिफिक ओशियन पर है. कूक आयलैंड 15 आयलैंड के समूहों का देश है. यहां वाइल्डलाइफ देखने लायक है। फिजी यह एक आयलैंड देश है जो पैसिफिक ओशियन पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- नादी, सूवा राजधानी, लौटोका, लाबासा।

ग्रेनाडायह भी आयलैंड देश है जो कैरेबियन सागर पर है. इसे 'आयलैंड ऑफ स्पाइस' कहते हैं. यहां घूमने लायक जगह है- सेंट जॉर्ज जो ग्रेनाडा की राजधानी है।

वानूआतूयह एक पैसिफिक आयलैंड देश है जो साउथ पैसिफिक ओशियन पर है. वानूआतू में घूमने लायक जगह हैं- पोर्ट विला जो यहां की राजधानी है, पेले आयलैंड, लुगानविले।

तुर्क एंड काइकोस आयलैंडयह आयलैंड कैरेबियन सागर पर है. तुर्क एंड काइकोस आयलैंड में घूमने लायक जगह हैं- ग्रैंड तुर्क आयलैंड, पाइन कै।

तुर्किश गणतंत्र उत्तरी साइप्रसयह साइप्रस आयलैंड के नॉर्थईस्ट में है. ड८१ीह्लं उत्तरी साइप्रस की टूरिज्म कैपिटल कही जाती है. यहां ढेरों एंटरटेनमेंट फैसिलिटीज हैं. यहां की नाइटलाइफ देखने लायक होती है।

थाईलैंडयह दक्षिण पूर्वी एशिया में है. थाईलैंड दुनिया का 51 बड़ा देश है. यहां घूमने लायक जगह हैं- बैंकॉक, पताया, क्राबी।

त्रिनिदाद और टोबैगोयह देश दो आयलैंड्स से मिलकर बना है. त्रिनिदाद और टोबैगो साउथ अमेरिका के उत्तरी किनारे पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- पोर्ट ऑफ स्पेन जो त्रिनिदाद और टोबैगो की राजधानी है, सैंट अगस्टाइन, पोइंट फोर्टिन।

मकाउ यह पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चीन का हिस्सा है. मकाउ दुनिया के अमीर शहरों में से एक है. यहां मकाउ घूमने लायक जगह हैं- टॉवर, गैलेक्सी मकाउ।

माइक्रोनेसिया यह आयलैंड वेस्टर्न पैसिफिक ओशियन में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- कोलोनिया, चूक लगून हनीमून डेस्टिनेशन।

मोंटसेरट आयलैंडयह एक कैरेबियन आयलैंड है. मोंटसेरट में घूमने लायक जगह हैं।

नेपालभारत का यह पड़ोसी देश साउथ एशिया में है. नेपाल में घूमने लायक जगह हैं- काठमांडू, पोखरा, पशुपतिनाथ मंदिर, नगरकोट, चितवन नेशनल पार्क, धूलीखेल।

पलाऊयह एक आयलैंड देश है जो वेस्टर्न पैसिफिक ओशियन में है. पलाऊ में घूमने लायक जगह हैं- कोरोर , रॉक आयलैंड।

पिटकैर्न आयलैंडयह साउथ पैसिफिक ओशियन में है. पिटकैर्न आयलैंड में घूमने लायक जगह है- हेंडरसन आयलैंड।

सेंट विन्सेंट और ग्रेनाडीन्सयह कैरेबियन सागर के इस्टर्न बॉर्डर पर है जहां अटलांटिक ओशियन मिलता है. सेंट विन्सेंट और ग्रेनाडीन्स में घूमने लायक जगह हैं- यूनियन आयलैंड, पोर्ट एलिजाबेथ, किंग्सटाउन, ग्रेनाडीन्स।

मॉरीशस यह भी एक आयलैंड है जो इंडियन ओशियन पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- पोर्ट लुई जो मॉरीशस की राजधानी है, ब्लैक रिवर जॉर्ज नेशनल पार्क, ग्रैंड बे, कसेला पक्षी उद्यान, फोक म्यूजियम ऑफ इंडियन माइग्रेशन।

सैंट किट्स एंड नेविसयह देश दो आयलैंड से मिलकर बना हो जो वेस्ट इंडीज में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- सैंडी प्वॉइंट टाउन, चार्लस टाउन।

जॉर्डन यह एक अरब राज्य है जो वेस्टर्न एशिया में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- अम्मन जो जॉर्डन की राजधानी है, अकाबा के बीच और किला, इरबिद, अल सॉल्ट, वादी रम का रेगिस्तान, मदाबा। होंग कोंगयह जगह अपनी स्काईलाइन्स के लिए जानी जाती है. यहां घूमने लायक जगह हैं- ओशियन पार्क होंग कोंग, होंग कोंग डिजनीलैंड, विक्टोरिया पीक, लनताऊ आयलैंड, तियान तन बुद्धा, पो लिन मोनैस्ट्री, क्लॉक टॉवर।

जमाइका यह एक आयलैंड है जो कैरेबियन सागर पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- किंगस्टोन, नेग्रील, पोर्ट रॉयल, स्पैनिश टाउन।

मालदीवयह एक आयलैंड देश है जो इंडियन ओशियन पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- माले जो मालदीव की राजधानी है इसे 'आयलैंड का राजा' कहा जाता है, माफुशी, अड्डू सिटी।

किष आयलैंड यह एक रिजॉर्ट आयलैंड है जो पर्सियन गल्फ में है. यहां घूमने लायक जगह हैं- ग्रीक शिप, किष डोलफिन पार्क, किश डायविंग सेंटर।

हैतीहिस्पैनिओला द्वीपयह कैरेबियन सागर के हिस्पैनिओला आयलैंड पर है. यहां घूमने लायक जगह हैं- पोर्ट औ प्रिंस जो हैती की राजधानी है, पोर्ट दे पैक्स, जकमेल।

A Home for Every one

Golden Wave Infratech Pvt. Ltd.

Visavi CO. PVT. LTD.

103, PANCSHEEL ENCLAVE, LAL KUAN, G.T. ROAD, GHAZIABAD Phone Office : +91-9871303060
E-mail : info@visavi.in | Web : www.visavi.in
Sanjay Yadav Director

Products List

SHIVORINE
Blood Purifire Syrup

SHIVOREX
Cough Syrup

SHIVOLIV 59
Syrup

SHIV-SUDHA
Uterine Tonic

SHIVONIGHT
Power Capsule

SHIV AYURVEDIC
Hair Oil

- कुर्मायासव
- अमृतारिष्ट
- अर्जुनारिष्ट
- पूर्नवारिष्ट
- दाक्षासव
- अशोकारिष्ट
- अश्वगंधारिष्ट
- खादिरिष्ट
- चंदनाआसव
- शिवारिष्ट
- दशमूलारिष्ट
- अभियारिष्ट
- वासारिष्ट
- कुर्टजारिष्ट

SHIV AYURVEDIC AUSHDHALAYA

Shiv Ayurvedic Aushdhalaya

Head Office : Sec-8/113, Chiranjeev Vihar, Ghaziabad
Branch Office : H. No.57, Nehru Chowk, Bhokerheri, Muzaffarnagar
B-5, Rkpuram, Govindpuram, Ghaziabad
Website : www.shivayurvedicaushdhalaya.com

सूर्या इन्कलेव

सूर्या नगर

निकट बांके बिहारी डेन्टल कॉलेज

मसूरी, गाजियाबाद

- एनसीआर में सबसे सस्ते प्लॉट, एनएच-24 से पैदल दूरी पर @9000/-गज (सैनिक व अर्द्ध सैनिकों के लिए विशेष छूट)
- पानी-बिजली की समूचित व्यवस्था
- पक्की नाली व काली सड़कें
- स्कूल, अस्पताल, पार्क की भी व्यवस्था

हेड ऑफिस :- RDC राजनगर, गाजियाबाद

सम्पर्क सूत्र : 9899139073
9654652505

सम्पूर्ण विश्व के प्राचीनतम तीर्थों में से एक विलुप्त शक्तिपीठ शिवशक्तिधाम, डासना के गौरव को पुनः स्थापित करने हेतु 100 दिवसीय भिक्षा यात्रा

भक्तगण,

गाजियाबाद में डासना स्थित शिवशक्तिधाम देवाधिदेव भगवान महादेव शिव और जगदम्बा महाकाली की ऐसी शक्तिपीठ है, जो विश्व के सर्वाधिक पूजित तीर्थस्थलों में से एक है। शक्तिपीठ को विदेशी आक्रमणकारियों ने ध्वस्त कर दिया था। अपनी आदत के अनुसार हिन्दू शक्तिपीठ को भूल गये। यति नरसिंहानंद सरस्वती जी महाराज शक्तिपीठ को पुनः सनातन धर्म का सर्वाधिक शक्तिशाली पीठ बनाने के लिए कृतसंकल्पित हैं। इस महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वो मकर संक्रांति 14 जनवरी 2019 से गाजियाबाद में सौ दिवसीय भिक्षा यात्रा कर रहे हैं। सभी भक्तों से अनुरोध है कि यात्रा में तन-मन-धन से सहयोग करने की कृपा करें। देवाधिदेव महादेव शिव और जगदम्बा महाकाली डासना वाली आप पर कृपा करें।

यति नरसिंहानंद सरस्वती

अखिल भारतीय संत परिषद के राष्ट्रीय संयोजक